174

जीवन यात्रा तथा सिद्धांत

गुरु अंगद देव जी

—प्रकाशक—

सिख मिशनरी कालेज (रजि.)

1051, कुचा 14, फील्ड गंज, लुधियाना-8

सब आफिस : A-143, फतेह नगर, नई दिल्ली-18,

रुपये

दो वर्षीय सिख मिशनरी पत्र विहार कोरस

में दाखला ले कर सिख धर्म की सही और पूरी जानकारी प्राप्त करें ।

(1) आप घर बैठें ही यह कोरस कर सकते हैं ।
(2) दाखला प्रत्येक भाई, बहन के लिये हर समय खुला है ।
(3) दो वर्षों का सारा सिलेबस आठ तिमाहीओं में बांटा हुआ है ।
(4) प्रत्येक तिमाही में शब्दों की व्याख्या, गुरु इतिहास, साखीयें, सिख फिलासफी और लैकचर आदि पूरा सिलेबस हल किया हुआ दिया जाता है ।
(5) दो वर्षों की दाखला फीस पांच रुपये है ।
(6) प्रत्येक तिमाही की पुस्तकों का खर्चा 30 रुपये है ।
(7) प्रत्येक तिमाही के साथ objective type प्रश्न पत्र भेजा जाता है जिसको घर बैठें ही हल करके वापिस भेजना होता है हल किये हुये प्रश्न सुधाई के पश्चात आप को वापिस भेज दिये जाएगें ।
(8) सफलता पूर्वक कोरस करने पर दो वर्षीय सिख मिश्नरी कोरस के प्रमाण पत्र दिये जाएगें ।
(9) प्रासपैक्टस (फार्म, सिलेबस, नियम आदि) दो रुपये का मनीआडर या डाक टिकटें भेज कर कालिज से मंगवाए ।

गुरबाणी, सिख इतिहास और सिख रहत मर्यादा सम्बन्धी खोज भरपूर लेखों द्वारा गुरमत विचारधारा को प्रचारने वाला मैगज़ीन

पंजाबी और हिन्दी के लिये

प्रत्येक कापी — 3 रूपये

सालाना चन्दा — 30 रू : देश — 250 रू विदेश
लाईफ मैंबरशिप — 300 रू : देश — 2500 रू : विदेश

चन्दा भेजने का पता

सिख मिशनरी कालिज (रजि :)

1051, कूचा न : 14, फीलड गंज, लुधियाना-8
सब आफिस - A-143, फतेह नगर, नई दिल्ली-110018

(Life Sketch & Teaching of Sri Guru Angad Dev Ji)

लेखक

स : महिंदर सिंघ 'जोश'

एम० ए०

प्रकाशक

सिख मिशनरी कालेज रजि:

1051, कूचा न० 14, फील्ड गंज, लुधिआणा-8

सब आफिस :- क-143, फतहि नगर, नई दिल्ली-18

सभी अधिकार प्रकाशक द्वारा सुरक्षित हैं

विषय सूची

जीवन वृत्तांत
श्री गुरू अंगद देव जी

(i) प्रारंभिक जीवन तथा परिवारिक पृष्ठभूमि

सिख इतिहास में श्री गुरू अंगद देव जी का आरभिक नाम **भाई लहणा** जी के नाम से प्रसिद्ध है। गुरू नानक साहिब ने गुरगद्दी की ज़िम्मेवारी सौंपते समय आप जी का नाम भाई लहणा जी से बदल कर गुरू अंगद देव जी रख दिया था।

आप जी का जन्म 31, मार्च सन् 1504 (तद्नुसार 5 बैसाख संवत् 1561) को ज़िला फिरोज़पुर के 'मते दी सरां', पिता श्री फेरू मल तथा माता सभराई के गृह में हुआ था। गांव 'मते दी सरां' समय पाकर वीरान हो गया था तथा एक उदासी नांगे साधु ने इसको पुन: बसाया था। अत: गांव का नाम ही नांगे दी सरां हो गया। वरण-आश्रमी मत की पुरानी बांट के अनुसार बाबा फेरू मल जी त्रेहण जाति के क्षत्रीय थे।

बाबा फेरूमल के पिता-पितामह ज़िला गुजरात के गांव संघोवाल के निवासी थे। रोज़गार के सिलसिले में वे गांव मते दी सरां में आ बसे थे। बाबा फेरू मल जी फारसी के अच्छे विद्वान थे। वे हिसाव–किताब और बही खाते (Accountancy) में अच्छी तरह निपुण थे।

आप कुछ समय तक फिरोज़पुर के पठान हाकिम के पास उसके आय-व्यय का हिसाब-किताब रखने के लिए मुख्या अधिकारी के तौर पर काम करते रहे। फेरू मल जी एक बहुत ही सच्चे-सुच्चे तथा नेक दिल इन्सान थे।

कुछ समय के पश्चात् वे मते दी सरां के चौधरी तख्त मल के पास बही-खाते के मुख्या अधिकारी के तौर पर आ नियुक्त हुए। चौधरी तख्त मल 60-70 गांवों का मालिक तथा बहुत धनाढ्य व्यक्ति था। पठानी राज्य दरबार में भी अच्छा रख–रखाव था। तख्त मल के सात पुत्र तथा एक पुत्री थी। पुत्री का नाम वीवी विराई था जो बाद में सिख इतिहास में एक बहुत ऊंची आत्मिक अवस्था वाली और भजन बंदगी करने वाली गुरसिख बीबी के तौर पर प्रकट हुई है। बाबा फेरू मल चौधरी तख्त मल के एक बहुत विश्वसनीय कार्यकर्त्ता थे, जिसके कारण दोनों के परिवारों मे बहुत गहरे संबंध थे और बहुत ही आपसी प्यार था। बावा फेरूमल वीवी विराई को अपनी सगी बहन के समान समझते थे और इसी कारण भाई लहणा जी उनको बुआ जी कह कर बुलाते थे। बीबी विराई का विवाह खडूर के चौधरी महमे के साथ हुआ था, जिसकी चौधरी तख्त मल की भांति आर्थिक दशा अच्छी थी और अच्छे राजसी ठाठ थे। बाद में जा कर भाई लहणा जी की सगाई भी खडूर से दो मील की दूरी पर स्थित, संघर गांव के एक धनी साहूकार देवी चंद मरवाहा क्षत्रीय की सुपुत्री बीबी खेम के साथ हुई, जो सिख इतिहास में माता खीवी के नाम से प्रसिद्ध हैं। यह शादी सन् 1519 में हुई थी जब भाई लहणा जी 15 वर्ष के थे।

वावा फेरूमल जी बहुत ही ईमानदार थे और तख्त मल के बहुत ही विश्वासपात्र सर्वेसर्वा थे, पर ईश्वर की करनी ऐसी हुई कि सन् 1517 के आसपास फेरू मल जी को तख्त मल की भारी क्रोधाग्नि का शिकार होना पड़ा। फेरूमल जी को उसने कैद कर दिया। बाबा फेरूमल जी के हिसाब-किताब की जांच करने पर हज़ारों रूपये का घाटा निकल आया। वावा फेरूमल जी ने एक पाई भी इधर से उधर नहीं की थी, पर हिसाव-किताव में हज़ारों रूपये के घाटे का हिसाव नहीं मिल रहा था। तख्त मल बहुत सख्त एवं क्रोध स्वभाव का घमण्डी धनाढ्य था। उसने वावा फेरूमल जी पर बहुत सख्ती की वह अपने पुत्रों व पत्नि आदि की भी सिफारिश मानने को तैयार न हुआ।

बालक लहणा जी को अपने पिता की ईमानदारी पर पूर्ण विश्वास था। इस मामले में किसी की भी पेश न जाती देख कर आपने दूर की सोची और इस मामले में सहायता के लिए बुआ विराई के पास खडूर आ गये। इस वास्तविकता का सारे परिवार को पता था कि बाबा फेरूमल जी को बीबी विराई के बिना कोई भी व्यक्ति तख्त मल की क्रोधाग्नि से नहीं बचा सकता। तख्त मल अपनी लाडली पुत्री विराई की किसी बात को भी कभी नहीं मोड़ता था। उधर बीबी विराई भी अपने धर्म बंधु फेरूमल जी की ईमानदारी से पूर्णत: अवगत थी। बीबी विराई इस समय तक पातशाह गुरू नानक की सिक्खी धारण कर चुकी थी। वह एक उच्चकोटि की दयावान और परोपकारी आत्मा थी। इस समय गुरू नानक देव जी खडूर साहिब में ही माया के प्रकोप में ग्रसित जनमानस को परमेश्वर का शीतल सुखदायी संदेश दे देकर कर संतृप्त कर रहे थे। भाई लहणा जी की सारी बात को सुन कर बीबी विराई, जो बाबा फेरूमल जी की ईमानदारी से पूरी तरह परिचित थी, ने लहणा जी को पूर्ण निश्चय से सलाह दी कि केवल सिफारिश के बल पर अपने धर्म बंधु फेरूमल को अपने पिता की कैद से छुड़वाना बहुत उचित नहीं है और अच्छी बात तो यह होगी कि लहणा जी पुन: सारे हिसाब-किताब की पड़ताल करें ताकि हिसाब-किताब में आया अंतर प्रकट हो सके तथा फेरूमल जी ससम्मान रिहा हो सकें। ऐसे परामर्श पर बीबी विराई ने अपने सम्मानीय पिता जी को यह संदेश भेज दिया कि फेरूमल जी को तुरंत रिहा कर दिया जाये ताकि वे अपने सुपुत्र लाहणा जी के साथ मिल कर हिसाब-किताब के चिट्ठे की अच्छी तरह जांच कर सकें।

इस सौभाग्यमयी अवसर पर भाई लहणा जी, बीबी विराई के साथ सतुगुरू नानक देव जी के सत्संग की भी हाज़री भरने गये और उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया। भाई लहणा जी की गुरू नानक साहिब के साथ वास्तव में यह प्रथम मुलाकात थी।

भाई लहणा जी बीबी विराई का संदेश लेकर चौधरी तख्त मल के पास पहुंचे। निश्चित परामर्श के अनुसार उन्होंने सारे खाते की पड़ताल करवाई। वे अपने पिता के खातों को ठीक करने में सफल हो गये। इस प्रकार उन्होंने अपने पिता को तख्त मल की क्रोधाग्नि से स्वतंत्र करवाया।

यह सही है कि बाबा फेरूमल जी बेइमानी के आधारहीन दोष से ससम्मान मुक्त हो गये पर वे तख्त मल की क्रोधाग्नि व अर्थहीन स्वभाव से पूरी तरह उपराम हो चुके थे। इस दौरान मुल्क के इस भाग में अशांति भी खूब बढ़ चुकी थी। छोटे सूबेदार शाह इब्राहीम लोधी की केन्द्रीय हकूमत के विरुद्ध नित्य प्रति दिन बग़ावतें कर रहे थे जिसके कारण उच्छृंखल लोगों को लूट मार करने का अवसर मिल गया और कई गांव लूट लिये गये। बाबर की कमान में मुग़लों के आक्रमण भी काबुल की दिशा से आरंभ हो चुके थे। गांव 'मते दी सरां'' भी लूटा जा रहा था। कुछ तो इन कारणों से और कुछ इसलिए भी कि फेरूमल जी दिलो-दिमाग़ से तख्त मल को ना-पसंद करने लग गये थे। आप भाई लाहणा जी तथा परिवार को लेकर अपने सम्बन्धियों के गांव के समीप "हरीके पत्तण" आ गये और तख्त मल की नौकरी छोड़ दी। "हरीके पत्तण" दिल्ली से लाहौर जाने वाली सड़क पर ब्यास नदी का प्रमुख घाट था। यहां पर अपनी दुकानदारी का स्वतंत्र कारोबार आरंभ किया पर कार्य संतोषजनक न होने के कारण कुछ दिनों के पश्चात् भाई लहणा जी के सुसराल के परामर्श पर खडूर आ गये और दुकानदारी का काम यहां पर आरंभ कर दिया जो समय पाकर बहुत कामयाब हुआ। खडूर, ब्यास नदी के इस छोर पर अच्छा कस्बा था। खडूर नगर में काम–काज बदल लेने की बात लगभग सन् 1524 की है। जब भाई लहणा जी बीस वर्ष की आयु के थे। याद रहे कि भाई लहणा जी की धर्म बूआ बीबी विरोई जी इसी खडूर नगर में विवाहित थीं।

भाई लहणा जी अपनी कुल रीति के अनुसार वैष्णव देवी के भक्त थे। उनके पिता अपने समय में प्रत्येक रात, अन्य देवी भक्तों के संग मिल कर ज्योति जगा कर बीच में रखते और आस–पास बैठकर

ढोल छैने आदि बजा कर देवी की भेंटों आदि का गायन करते थे। वे हर साल अपने संगी भक्तों की टोली आपने साथ लेकर देवी दर्शनार्थ जाते थे। वैष्णव देवी का मंदिर जम्मू से आगे पहाड़ों में है। खडूर से वैष्णव देवी जाने वाले यात्रियों को गुरू नानक पातशाह द्वारा बसाये गये नगर करतारपुर से होकर जाना पड़ता था। देवी भक्ति तो भाई लहणा जी को एक प्रकार से विरासत में ही मिली थी। आप आरंभ से ही धर्मात्मा, परोपकारी तथा साधु वृत्ति के व्यक्ति थे। पिता के साथ आप भी हर वर्ष देवी-भक्तों के टोले में शामिल हो कर देवी के दर्शनार्थ जाते थे।

पिता फेरूमल जी सन् 1526 ई० को कालवास हो गये। अब दुकान के कारोबार का सारा काम आपके कन्धों पर आ गया। इस समय आप की आयु 22 वर्ष की थी। देवी भक्तों की टोली के मुखिया की ज़िम्मेवारी भी आप पर आ गई। आप ने भी पिता की तरह हर वर्ष देवी भक्तों का टोला लेकर देवी के मंदिर की यात्रा का नियम जारी रखा। आप सदा इस देवी भक्तों के टोले के मुखिया होते थे। दुकानदारी के काम से निपट कर रात को देवी की भेटों का गायन भी आप भक्तों के टोले के मुखी के तौर पर करते थे। यह आपका मन भावन शुगल था। पिता के कालवास हो जाने के पश्चात् लगभग पांच वर्ष इस प्रकार के कर्मकांड चलते रहे।

सांसारिक दृष्टिकोण से आपकी दुकान पर कारोबार भी बहुत अच्छा चल रहा था। पारिवारिक तौर पर भी आप पूरी तरह सुखी थे। **दासू जी और दातू जी आप के दो पुत्र तथा बीबी अमरो जी तथा अनोखी जी दो पुत्रियां थीं।** आप धार्मिक रुचियों वाले तथा धार्मेक कहे जाने वाले लोगों के अग्रणी होने के कारण, काफी विख्यात तथा प्रभावशाली वाले व्यक्ति थे।

उपर्युक्त सब कुछ होने पर भी आप आत्मिक शांति प्राप्त न कर सके। आप अंदर से सदा अपने आप को खाली खाली सा महसूस करते। देवी की कपोल कथाएं आपकी आत्मा की संतुष्टि न करवा सकीं। उनकी आंखों के सामने काबुल से चढ़ कर मुग़लों ने हिंदुस्तान पर कई आक्रमण किये थे। **देश में बग़ावतों का ज़ोर था और उच्छृंखल लोग गांवों के गांव लूट लेते थे और गांवों के गांव उजाड़ दिये जाते थे। देवी भक्तों को भी मुल्क के बाकी लोगों के साथ ही रगड़ा लगता रहता था। देवी की शक्ति की काल्पनिक कथाओं पर, प्रत्यक्ष रूप में और कई और घटनाएं होते रहने के कारण, आपका विश्वास जमना कठिन हो गया था।**

तीर्थ यात्रा का यह कर्मकांड भी उन्हें बहुत खोखला तथा फीका लगने लगा था, पर फिर भी वे इसे किये जा रहे थे, क्योंकि आप समाज के कुछ हिस्से में तो धार्मिक अग्रणी के रूप में जाने जाते थे। तीर्थ यात्रा या देवी मंदिर की यात्रा को जारी रखने के बावजूद वे मानसिक तथा आत्मिक तौर पर शांत नहीं थे। वास्तव में बात यह थी कि आप एक सच्चे जिज्ञासु थे। आप सत्य तथा आत्मिक अडोलता की खोज में थे। आप ने महसूस किया कि देवी की कपोल–काल्पनिक कथाओं तथा उस आधार पर बनायी गयीं भेंट आदि उनके तथा उनके साथियों-सेवकों के आत्मिक जीवन के निर्माण में पूरी तरह असफल रही है। तीर्थ ~~यात्रा~~ का निरर्थक तथा खोखला साधन उनके भाईचारे की इखलाकी तरक्की तथा आचरणिक निर्माण के लिए फलदायी सिद्ध नहीं हो सकी थी। लोग अंदर से और तथा बाहर से और थे। आपने महसूस किया कि लोग भेंटें भी गाते हैं और देवी के दर्शन को भी जाते हैं, पर साधारण व्यावहारिक जीवन में ऊंचे तथा निर्मल आचरण को धारण करना आवश्यक नहीं समझते हैं। देवी की शक्ति की चर्चा तो बहुत थी, परंतु दलेरी, शूरवीरता तथा निर्भयता के गुण इन भक्तों से कोसों दूर थे। एक लंबे समय तक कर्मकांड करने तथा विशेष रीतियों में बंधे होने के बावजूद, न उनकी ईश्वर संबंधी जानकारी हो सकी थी और न ही उसके साथ अपनत्व ही पैदा हो सका था, न मानव जीवन का ध्येय या मंतव्य समझ आ रहा था और न ही स्थायी आत्मिक सुख प्राप्त कर पाने के लिए साधन ही सूझ रहे थे। अपनाये जा रहे साधन स्पष्ट तौर पर निरर्थक सिद्ध हो रहे थे।

आप आर्थिक तौर पर भी सुखी थे और पारिवारिक तौर पर भी एक सफल गृहस्थी थे, पर आत्मा अशांत थी। यहां हम पाठकों की सेवा में समूची गुरमत फिलासफी के पक्ष का उल्लेख करते हैं, जिस का भरपूर प्रचार श्री गुरू ग्रंथ साहिब में आई बाणी के अनुसार सिख सतगुरू साहिबान, भक्त आत्माओं तथा गुरसिख पैरोकारों ने अपने अपने तौर पर किया है।

(1) "*सुखु नाही बहुतै धनि खाटे ॥ सुखु नाही पेखे निरति नाटे॥*
सुखु नाही बहु देस कमाए ॥ सरब सुखा हरि हरि गुण गाए ॥"

(भैरऊ,महला ५, पृ० ११३७)

(2) "*तीरथि जाऊ त हउ हउ करते ॥ पंडित पूछउ त माइआ राते ॥* "

(आसा, महला ५, पृ० ३८५)

(3) "*पाप करहि पंचां के बसि रे ॥ तीरथि नाइ कहहि सभ उतरे॥*
बहुरि कमावहि होइ निसंक ॥ जम पुरि बांधि खरे कालंक ॥"

(प्रभाती, महला ४, पृ० १३४८)

(4) *जो पाथर कउ कहते देव ॥ ता की बिरथा होवै सेव॥*
जो पाथर की पांई पाइ ॥ तिस की घाल अजांई जाइ ॥"

(महला ५, पृ० ११६०)

(5) "*देवी देवा पूजीअै भाई, किआ मागउ किआ देहि ॥*
पाहणु नीरि पखालीअै भाई, जल महि बूडहि तेहि ॥ "

(सोरठि, महला १ पृ० ६३७)

(6) "*नावन कउ तीरथ घने, मन बउरा रे, पूजन कउ बहु देव ॥*
कहु कबीर छूटन नही, मन बउरा रे, छूटनु हरि की सेव ॥ "

(गउड़ी कबीर, पृ० ३३६)

(1) गुरमत विचारधारा के अनुसार अधिक धन कमा लेने से अथवा सांसारिक आनंद भोग लेने से अपना देश-देशांतर की सैर कर लेने से या अन्य प्रकार की कृत्रिम मायावादी प्राप्तियों से सदा कायम रहने वाला सुख प्राप्त नहीं हो सकता। स्थायी सुख या सहज अवस्था तो ईश्वर के साथ प्यार डालने पर ही प्राप्त हो सकती है।

(2) तीर्थों के चक्कर काटने से मन में अहंकार का विकार पैदा होता है, जो आत्मिक जीवन बर्बाद कर देता। ब्राह्मणी मत के पंडितों से परमार्थ की बात कैसे ग्रहण की जा सकती है वह तो स्वयं माया के कीचड़ से भरे हुए हैं।

(3) लोग पांच विकारों के अधीन होकर पाप कमाते हैं और ऐसे अंधविश्वासों के वशीभूत यह समझते हैं कि तीर्थों पर स्नान करने से पाप उतर गये हैं, और इस प्रकार फिर नये सिरे से स्वतंत्र हो कर पाप कमाने लग जाते हैं।

(4) पत्थरों को ईश्वर समझ कर पूजा करने वालों तथा पत्थरों की मूर्तियों के चरणों में गिरने वालों की सारी मेहनत व्यर्थ चली जाती है।

(5) देवी-देवताओं की पूजा करने तथा उनसे मांगने से क्या बन सकता है ? इनके पास देने को है ही क्या ?

(6) सांसारिक जीवन भी क्या करें ? संसार में धर्म के ठेकेदारों ने अनंत तीर्थ स्थापित कर रखे हैं। इसी प्रकार मनुष्यों को गुमराह करने के लिए अनंत देवी-देवता भी प्रचलित कर दिये गये हैं। मनुष्य का कल्याण इन तीर्थों पर देवी-देवताओं के साथ नहीं, परमेश्वर के सुमिरन मात्र द्वारा ही हो सकता है।

(7) *तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है ॥*
तीरथु सबद बीचारु अंतरि गिआनु है ॥

(धनासरी, महला १, ६८७)

गुरमत के अनुसार गुर शब्द की विचार तथा उसे दैनिक जीवन में ढालना ही तीर्थ-स्नान है।

(2) भाई लहणा जी गुरू नानक देव जी के संपर्क में

यहां पर पाठकों का ध्यान गुरू नानक साहिब के जीवन इतिहास की ओर आकर्षित किया जाता है। गुरू नानक पातशाह अपने प्रचारकभ्रमणोंके पश्चात् (जिनको कि आप की जन्म साखियों में "उदासियों" का नाम दिया गया है) सन् 1521 में करतारपुर में आकर बस गये थे। यहां आपने लोगों को एक आदर्श व्यावहारिक जीवन की शिक्षा देने के लिए कार्यक्रम की योजना बनायी, जोकि इतिहास में सुनहरी अक्षरों में लिखे जाने के योग्य है। आप द्वारा अपने पैरोकारों को, श्रम करने, बांट कर खाने तथा नाम का जाप करने की संसार की सबसे ऊंची, महान् तथा संपूर्ण शिक्षा व्यावहारिक तौर पर दी गयी। गुरू नानक पातशाह ने स्वयं खेतीबाड़ी के एक पवित्र कार्य को अपनाया, सत्संग के लिए तथा आत्मिक जीवन के निर्माण के लिए धर्मशालाएं कायम कीं तथा मानवीय भाईचारे की सांझी उन्नति के लिए मनुष्यों में परस्पर प्यार, सह-अस्तित्व, सेवा तथा परोपकार की भावना भरने के लिए सर्वसांझे लगर की स्थापना की, जो मानवीय भाईचारे में से जाति-पात तथा छूतछात के भूत को निकालने का सफल प्रयास था।

आप स्वयं सामान्य पंजाबी किसान की वेशभूषा में रहते, खेतीबाड़ी करते, सुबह तथा सांझ को सत्संग के द्वारा आये गये जिज्ञासुओं की आत्मिक रहनुमाई देते थे। आप अब पहले की भांति बहुत दूर तो नहीं जाते थे, पर समय मिलने पर आस--पास के क्षेत्रों में, गांवों में गुरमत प्रचार के लिए निकल जाया करते थे। अपने प्रचारक दौरों के दौरान आप अनेकों गांवों तथा नगरों में लोगों को सच्चे मार्ग पर डाल चुके थे और करतारपुर के आसपास तथा काफी दूर तक के इलाकों में, शायद ही कोई ऐसा गांव या नगर हो, जहां गुरमत के अनुयाई काफी संख्या में न मिल जाते हों। इसी क्षेत्र के नगर बटाले में गुरू नानक देव जी का विवाह हुआ। गोइंदवाल तथा अमृतसर नगर अभी स्थापित नहीं हुए थे। करतारपुर से लगभग 50 मील की दूरी पर खडूर नगर स्थित था है। अपने प्रचारक भ्रमणों के दौरान आप इस नगर के अनेकों लोगों को परमेश्वर के चरणों के साथ जोड़ चुके थे। भाई लहणा जी की बूआ बीबी विराई, गुरू नानक देव पातशाह से उपदेश लेकर बहुत उच्च आत्मिक अवस्था को प्राप्त कर चुकी थी। खडूर में ही भाई जोध रहता था जो गुरू नानक देव जी का बहुत श्रद्धालु सिख था।

परमेश्वर की करनी ऐसी हुई कि भाई लहणा जी, जो आत्मिक तथा मानसिक तौर पर अपने आपको बहुत विरक्त व खाली-खाली सा महसूस कर रहे थे, को एक दिन सवेरे भाई जोध जी के मुंह से गुरू नानक देव जी की बाणी सुनने का अवसर बन आया। इस समय तक वे केवल गुरू नानक देव जी के नाम से ही परिचित नहीं थे बल्कि कुछ साल पहले बीबी विराई के साथ जाकर खडूर में उनके दर्शन भी कर चुके थे, पर आप का मन गुरमत ग्रहण कर पाने को अभी तैयार नहीं हुआ था। सिख इतिहास

बताता है कि भाई जोध के मुंह से जब भाई लहणा जी ने आसा की वार की 21वीं पउड़ी की निम्नांकित पंक्तियों का मधुर पाठ सुना, तो भाई लहणा जी के जीवन की काया ही पलट गयी :—

"जितु सेविऐ सुखु पाईऐ, सो साहिबु सदा समालीऐ ।।
जितु कीता पाईऐ आपणा, सा घाल बुरी किउ घालीऐ ॥
मंदा मूलि न कीचई, दे लंमी नदरि निहालीऐ ॥
जिउ साहिब नालि न हारिऐ, तेवेहा पासा ढालीऐ ।
किछु लाहे उपरि घालीऐ ॥ २१ ।।

उस समय के पंजाब में प्रचलित भाषा में उच्चारित इस पउड़ी का तात्पर्य भाव समझने में भी भाई लहणा जी को कोई कठिनाई नहीं थी। ये पंक्तियां कितनी आकर्षक हैं जिनके द्वारा गुरू नानक देव जी संसार के प्रत्येक मनुष्य को माया के मोह की नींद से बड़ी ज़ोरदार आवाज में जगाते हैं। जिस परमेश्वर का सिमरन करने से मनुष्य को सदा कायम रहने वाला आत्मिक सुख प्राप्त होता है उस मालिक को सदा याद रखना चाहिए। जब अपने किये सभी कर्मों का फल स्वयं ही को भुगतना है तो कोई दुष्कर्म किया ही क्यों जाये? दुष्कर्म बिल्कुल ही नहीं करना चाहिए तथा प्रत्येक काम करने से पूर्व दीर्घ दृष्टि के द्वारा उसके परिणाम का पहले ही अनुमान लगा लेना चाहिए। मानव जीवन रूपी चौपड़ में ऐसा शुभ कर्म रूपी पासा फैंकना चाहिए जिससे मालिक प्रभु के सामने मानव जीवन की बाज़ी हार कर न जायें। बल्कि यह मानव जीवन प्राप्त करके कोई लाभ वाला उद्यम करना चाहिए।

भाई लहणा जी की अंसमस्त अंवर्रात्मा हिल गई। आप सोचने लगे कि क्या देवी की भेंटें गा-गा कर तथा देवी दर्शनों की यात्राओं की गलत राह पर चल कर मानव जीवन की चौपड़ में बाज़ी हार कर तो नहीं जा रहे। अपनी ओर से कमाये सभी कर्म कांडों के बारे में अपने मन में पड़ताल करने लगे। बहुत परेशान से होकर अपनी मानसिक दशा का वर्णन करने के लिए वे बीबी विराई के पास आ पहुंचे और सलाह मांगी। आत्मदर्शी बीबी ने पहले हो चुके मिलाप की बात भी याद करवाई तथा उपरोक्त बाणी के रचयिता गुरू नानक देव जी, जो उन दिनों में करतारपुर साहिब में टिके हुए थे, के दर्शन करने तथा सत्संग करने का परामर्श दिया।

गुरू नानक पातशाह की बाणी सुनने की यह घटना सन् 1532 की है तथा यह बात बिल्कुल उन्हीं दिनों की थी जब अक्तूबर-नवम्बर के महीनों में देवी दर्शन हेतु आप देवी भक्तों की टोली तैयार कर चुके थे। पर आपने—अपने मन में निर्णय कर लिया कि इस बार वैष्णव देवी की यात्रा पर जाते हुए, राह में करतारपुर में गुरू नानक देव जी के दर्शन अवश्य करने हैं।

भाई लहणा जी की गुरु नानक साहिब से भेंट

अक्तूबर-नवम्बर सन् 1532 में भाई लहणा जी अपने देवी भक्तों की टोली सहित जम्मू की ओर जाते हुए रास्ते में करतारपुर के समीप पहुंचे। देवी भक्तों की टोली ने रात को करतारपुर के बाहर डेरा लगाया, भेटें गाईं तथा भोजन करके सो गये। अगले दिन देवी भक्तों की टोली तो वहीं रुकी तथा उस के नेता भाई लहणा जी अपने साथियों से कुछ समय मांग कर, अपनी घोड़ी पर सवार होकर, गुरू नानक पातशाह के दर्शन करने के लिए करतारपुर नगर की ओर चल पड़े। नगर की ओर थोड़ा—सा फासला ही अभी तय किया होगा कि घोड़ी पर चढ़े हुए भाई लहणा जी को रास्ते में सड़क पर पैदल जाते हुए गुरू नानक पातशाह मिल गये। भाई लहणा जी ने गुरू नानक देव जी को न पहचानते हुए, उन से ही गुरू नानक साहिब का टिकाना जा पूछा। आगे से गुरू नानक देव जी ने पैदल चलते हुए भाई लहणा जी

को अपने बारे में कुछ बताये बिना ही यह कह दिया की वे घोड़ी पर चढ़े हुए उनके पीछे-पीछे आते जायें ताकि उन्हें गुरू नानक के घर में पहुंचाया जा सके। निष्कर्ष यह कि गुरू नानक देव जी को भाई लहणा जी पहचान न पाये।

गुरू नानक देव जी पहचाने क्यों न गये ?

यहां पर एक पक्ष बहुत ध्यानाकर्षण मांगता है कि भाई लहणा जी से गुरू नानक देव जी पहचाने क्यों न गये ? जबकि भाई लहणा जी ने एक बार पहले भी गुरू नानक देव जी के दर्शन किये थे। एक कारण तो यह था कि उन्हें गुरू नानक देव जी के दर्शन किये कई बर्ष हो गये थे। सन् 1517 के पश्चात् सन् 1532 आ गया था। फिर पहली बार के दर्शन कोई एकांत चित्त होकर नहीं किये गये थे। पर सबसे बड़ा कारण भिन्न ही था जो वास्तव में सिख इतिहास का एक बहुत उज्जवल पृष्ठ बन जाता है।

सतगुरू नानक देव जी इस समय तक अपने प्रचारक दौरों से लगभग निपट चुके थे। आप जहां पर भी गये, जिस भी धार्मिक नेता या व्यक्ति को मिले थे, उसके हृदय में अपने अति पवित्र तथा महान् व्यक्तित्व की गहरी छाप छोड़ चुके थे। आप कोई साधारण संत महात्मा तो थे नहीं। क्या जोगी, क्या ब्राह्मण तथा क्या मुल्लां मुलाणे, सब आप द्वारा किये गये मार्ग दर्शन के बहुत कायल थे। यह सब कुछ होने के बावजूद गुरू नानक पातशाह लोगों से अपनी व्यक्तिगत पूजा बिल्कुल ही नहीं करवाना चाहते थे और न ही उन्होंने कभी अपनी निजी पूजा किसी से करवाई ही थी। अपनी व्यक्तिगत पूजा करवाने की इच्छा वाले संतों महात्माओं को सदा विशेष भेष या लिबास धारण करने की आवश्यक्ता रही है, और आने वाले समय में निजी पूजा करवाने वाले साधु-संतों तथा देहधारी गुरूओं को भांति-भांति के भेषों लिबासों की आवश्यकता अवश्य रहेगी। इसके विपरीत गुरू नानक साहिब ने करतारपुर में अपनी आयु के जो अंतिम 18 वर्ष व्यतीत किये थे, वे किसी साधु वेश की जगह पर एक साधारण पंजाबी किसान या घर-गृहस्थी वाले परिश्रमी के रूप में व्यतीत किये थे। वहां पर न गोल पेचदार पगड़ी थी, न लंबा चोगा, न भगवा कपड़े आदि और न ही माला, बैरागण का कोई ढोंग था। वहां न खड़ाव से पायलें डालने की आवश्यकता थी और न ही भांति-भांति के तिलक ही माथे पर लगाने की ज़रूरत समझी गयी। यही कारण था कि भाई लहण जी प्रथम भेंट के समय गुरू नानक देव जी को पहचान ही नहीं सके। यदि गुरू नानक देव जी दूसरे पाखण्डी साधुओं की तरह किसी विशेष वेश में होते तो भाई लहणा जी को पहचानने में कोई भ्रम होने की कोई संभावना नहीं थी।

भाई लहना जी घोड़ी पर चढ़े हुए आगे आगे चल रहे गुरू नानक पातशाह के पीछे पीछे जा रह थे। जब दोनों गुरू नानक देव जी की धर्मशाला वाली जगह पर पहुंचे, तो गुरू नानक देव जी ने भाई लहण जी को घोड़ी खूंटी के साथ बांध कर अंदर आने की प्रेरणा की। अंदर जा कर जब भाई लहणा जी को पता चला कि घोड़ी के आगे पैदल चलने वाला साधारण दीखने वाला व्यक्ति गुरू नानक देव जी है, तो आप कांप गये। आप मन में बहुत शर्मिंदा और परेशान हो रहे थे कि उन्होंने स्वयं घोड़ी पर चढ़ कर गुरू नानक देव जी को आगे आगे चलने का अवसर क्यों दिया ? यह शिष्टाचार के विपरीत तथा गुरू नानक देव जी के अपमान करने के तुल्य था। इतिहास में वर्णन आता है कि इस अवसर पर गुरू नानक देव जी ने भाई लहणा जी से उनका नाम पूछा। **"लहणा" बताने पर गुरू नानक देव जी ने बहुत प्यार से वचन बिलास में कह दिया कि भाई! मन में परेशान होने की आवश्यकता नहीं है। नाम के अनुसार आपने हमसे कुछ लेना है और लेनदार सदा घोड़ी पर चढ़कर ही आया करते हैं।**

भाई लहणा जी गुरू नानक पातशाह के प्यार भरे अमृत-वचनों से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने अब सदा के लिए गुरू नानक पातशाह के चरणों में ही रहने का मन बना लिया। अब देवी की भेंटे तथा तीर्थ यात्राओं के साधनं आप को निरर्थक लगने लग गये थे। गुरू नानक पातशाह ने अपने उपदेश द्वारा

आप के मन की सभी शंकाएं सदा के लिए समाप्त करके आप को परमेश्वर के साथ जुड़ने का असली मार्ग सुझा दिया था। उन्होंने देवी भक्तों की टोली को भी जा कर यह बात स्पष्ट कर दी कि वे आत्मिक तौर पर जिस चीज़ से आज तक विरक्त रहे हैं, वह अब उनको मिल चुकी है। अत: आज से वे देवी देवताओं के चक्कर में नहीं पड़ेंगे और बाकी का जीवन गुरू नानक देव जी के दरबार में रह कर सिख सिद्धांतों के अनुसार व्यतीत करेंगे।

पए कबूल खसंम नालि जा घाल मरदी घाली

बलवंड जी ने गुरू ग्रंथ साहिब के रामकली राग में दर्ज "राइ बलवंडि तथा सतै डूमि आंखी" के शीर्ष वाली वार में गुरू अंगद देव जी के बारे में उपरोक्त बात कह कर मानों गागर में सागर भर दिया है। बलवंड जी कहते हैं कि गुरू अंगद देव जी ने मर्दों वाला [भाव कठिन तथा कठोर] परिश्रम किया, तो ही वे अपने सतगुरू, गुरू नानक के दर पर स्वीकार्य हुए थे।

भाई लहणा जी लगभग सात साल गुरू नानक देव जी की संगत में रहे। इस दौरान सैंकड़ों घटनाएं हुईं जिन में से केवल कुछ घटनाओं का ही सिख इतिहास हवाला देता है। ये घटनाएं गुरमत के कई पक्षों पर प्रकाश डालती हुईं एक ओर तो भाई लहणा जी के अद्वितीय व्यक्तित्व पर प्रकाश डालती हैं और दूसरी ओर गुरू नानक देव जी के मत वाले गुणों को भाई लहणा जी ने किस प्रकार अपने आचरण के निर्माण में ये गुण तेज़ी से ग्रहण कर लिये, इस पक्ष को भी भली–भांति प्रकाशमान करती हैं।

यहाँ एक–दो घटनाएँ पाठकों की सेवा में प्रस्तुत करना ज़रूरी समझते हैं। एक तो भाई लहणा जी के अद्वितीय व्यक्तितव पर प्रकाश डालती हैं। दूसरे इस बात को भी भली भांति प्रकाशमान करती हैं कि गुरू नानक देव जी की शिक्षाओं को उन्होंने अपने चरित्र निर्माण में किस तीव्र गति से ग्रहण किया था। स्वत: ही वे विशेषताएं अपना जलवा दिखाती हैं। यथा इस मत के धारणकर्त्ता ब्राहमण, क्षत्रीय आदि अपने आप को, समाज के श्रमिक वर्ग से, जिस का नाम इन्होंने शूद्र रखा हुआ था, बहुत ऊंचा तथा निर्मल समझते थे तथा शूद्रों के साथ नफ़रत करते हुए इस सीमा तक आगे बढ़ जाते थे कि उनसे साथ व्यवहार करना तो कहीं रहा, उनके छू जाने तक से बचने का यत्न करते थे। सच्च-झूठ के भ्रम बिना इस मत का धारणी अपनी साधना कर ही नहीं सकता। अलग–अलग तीर्थों पर जा कर, भांति–भांति के जल में स्नान करते फिरना तथा भांति–भांति के मंदिरों के दर्शनों को पवित्र कहते रहना इस मत के पैरोकारों का इच्छुक शौक हुआ करता है। फिर ये श्रद्धालु जैसे–जैसे अपने मत द्वारा दर्शायी साधना गिने हुए तोता–रटन पाठ करने–करवाने, वेदों–शास्त्रों के भाड़े पर पाठ करवा कर बिना सुने, बिना विचारे तथा बिना माने महातम प्राप्त कर लेने के लिए तत्पर रहना, निओली कर्म करना, मौन धारण करने, व्रत रखने, पूजा अर्चना तथा डंडवत के नाटक करने, खास खास दिनों पर खास-खास स्थानों पर ब्राह्मणों को दान देने, किसी जगह को कष्टकर तथा किसी जगह को पवित्र मानना और इसी प्रकार पूर्णिमा, अमावस तथा सक्रांति आदि कुछ विशेष दिनों को, पवित्र विशेष कर के मानना तथा उन दिनों में कुछ विशेष कर्म कांड पूरे करना, जनेऊ धारण करना, भांति-भांति के तिलक माथे पर लगाना, रसोई की सुचमता को ध्यान में रख कर लकीरें लगानी आदि में परिपक्व होता जाता है, वैसे-वैसे उस के मन में छुआ-छात का भेद भाव और अधिक दृढ़ होता जाता है। उसका अहंकार बढ़ता जाता है। धर्म के नाम पर अधम कमाने की ये हरकतें वास्तव में धर्म का मज़ाक उड़ाने के तुल्य हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि वर्ण-आश्रम के सिद्धांतों को इतने समय तक मानने के बावजूद भाई लहणा जी इनसे अभी पूरी तरह प्रभावित नहीं हुए थे। वे अपने मन में इन की असारता को अवश्य महसूस कर रहे थे और सच्चे मार्ग की आकांक्षा भी रखते थे। पर एक काल तक इस रास्ते पर चलते रहने के कारण यह मत अपने पूर्वजों से विरासत में प्राप्त किया होने के कारण वे व्यावहारिक तथा बौद्धिक तौर

पर वर्ण आश्रम केत के रंग में रंगे हुए थे तथा उसी के विश्वासों को मन में जमाये बैठे थे। गुरू नानक देव जी ने व्यावहारिक तौर पर भाई लहणा जी को पहले विचारों तथा जीवन युक्ति से मुक्ति दिलानी थी।

गुरू नानक देव जी तथा भाई लहणा जी के इन सात वर्षीय मिलाप के दौरान हुई घटनायें एक और बहुत ही महत्वपूर्ण पक्ष पर प्रकाश डालती हैं। भाई लहणा जी से पूर्व भी लाखों जिज्ञासु गुरू नानक देव जी से आत्मिक रहनेतृत्व प्राप्त कर चुके थे। उनमें से अनेकों ही गुरू नानक पातशाह के पहुंचे हुए श्रद्धालु थे और उनके आदेशों को पूरी तरह पालते तथा उन पर पूर्ण विश्वास रखते थे। गुरसिक्खी का सब से अधिक मौलिक सिद्धांत तो यही है कि सिख, सतगुरू के आदेशों को पूरी तरह श्रद्धा भावना से'सति सति' कर के माने और बिना किसी संदेह के भक्ति–भावना सहित अपने जीवन के व्यवहार में उतारे। गुरू नानक देव जी के अनेकों श्रद्धालु सिखों ने अपनी–अपनी सामर्थ्यानुसार गुरू नानक के आदेशों को अपने व्यावहारिक जीवन में उतारा तथा श्रद्धा भक्ति से माना। पर इस मामले पर आदेश मानने के सिद्धांत की जो आदर्श व्यावहारिक व्याख्या भाई लहणा जी ने कर के बताई, उस का कहीं और उदाहरण नहीं मिलता है।

श्रद्धा–भक्ति से गुरू के आदेशों को पूर्ण तन-मन से मानने का जो आदर्श भाई लहणा जी ने प्रस्तुत किया, उस ने भाई लहणा जी के बाद के सारे सिख इतिहास में सिखों के चरित्र–निर्माण में महान् रोल अदा किया। ऐसा लगता है, जैसे गुरगद्दी पर विराजमान होने से पूर्व ही गुरू अंगद देव जी ने गुरू के आदेश को मानने के मौलिक सिद्धांत को सारे सिख जगत के प्रति व्यावहारिक तथा आदर्श रूप में समझने के लिए ही यह सब कुछ किया हो।

उन घटनाओं का वर्णन करने से पूर्व आदेश मानने के सिख सिद्धांत पर कुछ शब्द लिखना आवश्यक समझते हैं। हमारे में से अनन्त लोगों ने संसार की सब से ऊंची पर्वत चोटी माऊंट एवरेस्ट को आंखों से नहीं देखा, पर उस के बारे में कुछ समझने के लिए आवश्यक है कि जिस ने उस चोटी को आंखों से देखा है, उस पर विश्वास किया जाये। समुद्रों की गहराई के बारे में ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन लोगों पर विश्वास करना ही पड़ता है जिन्होंने परिश्रम कर के समुद्रों के उदर की पड़ताल कर ली है। यदि पहली–दूसरी कक्षा का बच्चा, अध्यापक के आदेश्म के अनुसार पहाड़े याद करने के लिए बार बार रट्टा न लगाये तथा हुज्जतबाज़ी कर रहे तो वह आगे चल कर हिसाब की विद्या के अति विषम फार्मूले कैसे समझ सकेगा ? गुरमुखी वर्णमाला के कुल अक्षर 35-40 ही हैं और अंग्रेज़ी वर्णमाला के कुल अक्षर 26 हैं। यदि विद्यार्थी, अध्यापक के आदेश्म के अनुसार इन अक्षरों की मेहनत से पूरी पहचान न सीखे और उसका आदेश न माने और हुज्जतबाज़ी करता हुआ उन अक्षरों पर ही अड़ जाए रहे, तो आगे चल कर वह ज्ञान विज्ञान की महान पुस्तकों का अध्ययन कैसे कर पायेगा जिनके लिए कि 35 या 26 अक्षर रटाये जा रहे हैं। इसी प्रकार ऊंची आत्मिक अवस्था को प्रास करने के लिए आवश्यक है कि गुरसिख या सच्चा जिज्ञासु अपने आप को हुज्जत से बचा कर रखे तथा सतगुरू सहिबान के आदेशों (वाणी) को पूर्ण श्रद्धा भावना से माने।

यहां पर यह बात भी समझ लेनी चाहिए कि गुरसिखी का यह आदेश मानने वाला सिद्धांत मानसिक गुलामी पैदा करने के लिए नहीं है बल्कि एक ऊंचे आदर्श की प्राप्ति के लिए है, यथा :

"हुकमि मंनिऐ होवै परवाणु ता खसमै का महलु पाइसी ॥ "

अर्थात् गुरू का हुक्म मानने से हम उस अवस्था को प्रास कर लेते हैं जहां हुक्म देने वाले तथा हमारे बीच कोई अंतर नहीं रह जाता है। सिख ने गुरू के साथ एक रूप हो जाना है। इस संबंध में तो गुरू अंगद देव जी का अपना फुरमान इस प्रकार है :

"ऐह किनेही चाकरी जितु भउ खसम न जाइ ॥ "

यहां पर यह भी समझ लेना चाहिए कि गुरमत इस सिद्धांत के द्वारा अंधविश्वास की भावना पैदा नहीं करता। इस सिद्धांत का उद्देश्य तो सिख के मन में गुरू के लिए दृढ़ निश्चय, विश्वास, श्रद्धा तथा भक्ति पैदा करना है, जिस के बिना ऊंची आत्मिक अवस्था प्राप्त करना नामुमकिन है। अंध–विश्वास तो है ही पराधर्म की वस्तु, जिसका वर्णा-आश्रम के मत से अधिक गहरा संबंध है। इस बारे में गुरमत सिद्धांत तो बहुत ही स्पष्ट है :

"अकली साहिब सेवीऐ, अकली पाईऐ मानु ॥"

भाई लहणा जी गुरू नानक देव जी का दर्शन करके तथा फिर उन की संगत करने के उपदेश ग्रहण करने के पश्चात् गुरू नानक तथा केवल गुरू नानक के ही हो गये थे। इतिहास में वर्णन है कि गुरू नानक देव जी ने दो बार उन को वापिस खडूर भेज दिया पर दोनों बार कुछ दिन के पश्चात् आप वापिस करतारपुर आते रहे। आप जी ने गुरू नानक पातशाह का मत पूरी तरह श्रद्धा भक्ति से ग्रहण कर लिया था और देवी पूजा तथा वर्ण–आश्रम मत से अपनी जान छुड़वा ली थी। गुरू नानक देव जी की सातवर्षीय संगत में अनेकों घटनाएं घटीं जिनके द्वारा भाई लहणा जी की सिखी परिपक्वता, गुरू भक्ति, आदेश मानने की बात तथा गुरू नानक पातशाह की महानता स्पष्ट होती है। इतिहास में आई कुछेक घटनाओं का वर्णन यहां पर किया जाता है।

1. चारे की गांठें उठाना :

कुछ दिन तक गुरू नानक देव जी की संगत करने के पश्चात् गुरू नानक देव जी ने करतारपुर से भाई लहणा जी को वापिस खडूर भेज दिया। आप खडूर बहुत दिन तक न रहे सके। दुकान का सारा कारोबार अपने भानाजे के सपुर्द कर के फिर करतारपुर चल पड़े। चलते समय आप ने गुरू बाबा के लंगर के लिए बहुत सा नमक प्रेम भेंट के रूप में ले लिया। जब करतारपुर डेरे में पहुंचे तो गुरू नानक देव जी अपने खेतों में काम करने गये हुए थे। नमक को डेरे के लंगर में रख कर भाई लहणा जी भी खेतों में पहुंच गये।

गुरू नानक देव जी धान के खेतों में से खर-पतवार निकलवा रहे थे। आप भी, गुरू नानक देव जी के साथ काम करने लग गये। भाई लहणा जी दुकानदारी आदि के कार्यों से अवगत थे। खेतीबाड़ी का काम आप के लिए नया भी था और सख्त भी। पहले तो आप घास के साथ धान भी निकालते गये। **गुरू नानक देव जी ने तभी गूढ़ वचन कर दिये कि "भाई! यह काम छोड़ दे। यह तेरे करने का नहीं है। तुमने पौधे लगाने हैं, उखाड़ने नहीं।"** पशुओं के लिए चारे की गांठें तैयार हो गयीं। कुछ गुरू नानक देव जी ने उठा लीं और कुछ भाई लहणा जी को उठवा दी गयीं। दुकानदारी के आसान काम को करने वाले भाई लहणा जी के लिए यह काम अपनी किस्म का नया था। गीली गीली गांठों में से मैला पानी टपक रहा था और आप के स्वच्छ वस्त्रों को गंदा कर रहा था। यह सख्त काम साधारण किसान तो स्वयं करते थे और धनाद्य किसान अपने श्रमिकों से इसे करवा लिया करते थे, जो आम तौर पर शूद्रों में से ही हुआ करते थे। भाई लहणा जी ने यह काम बिना किसी झिझक के चाव से किया था। घर पहुंचे तो गुरू जी के महल (पत्नि) माता सुलखणी जी ने कहा कि ये गांठें उन्होंने भाई लहणा जी के सिर पर क्यों उठवाई हैं और उनके सुंदर वस्त्र कीधड़ से खराब करवा दिये हैं ? गुरू नानक पातशाह का गूढ़ उत्तर भी बेमिसाल था। कहने लगे कि **"लहणा जी के सिर पर चारे की गांठे नहीं, बल्कि दीन--दुनिया का छत्र रखा है और कपड़ों पर गिरे छींटे, कीचड़ के नहीं, केसर के हैं।"** समय पा कर भाई लहणा जी ही गुरगद्दी के अधिकारी बने।

कीचड़ में लबालब चारे की गांठें उठाना एक धनाद्य क्षत्रीय नौजवान के लिए अनजान दृष्टि से देखने पर एक अनोखा–सा काम था, पर गुरू के लिए अटूट श्रद्धा प्यार होने के कारण भाई लहणा जी

ने इस काम से ज़रा भी संकोच नहीं किया। फिर इस तरीके से श्रमिकों तथा शूद्रों के करने वाले काम को उन्हें सौंप कर गुरू नानक देव जी भाई लहणा जी को सारी मनुष्य जाति को एक समान समझने तथा ऊंच नीच के भेद–भाव को दूर करने का तरीका भी बता रहे थे।

2. धर्मशाला में से मरी हुई चूहिया निकालना।

एक बार धर्मशाला का दरवाज़ा खोला गया। अंदर मरी हुई चूहियां पड़ी थी। मरी हुई चुहिया को धर्मशाला में से उठा कर बाहर फैंकने का काम आज हमें बहुत साधारण लगता है, पर वर्ण-आश्रम के मत के मारे हुए तत्कालीन हिंदू समाज का कोई क्षत्रीय नौजवान, मरी हुई चूहिया को उठा कर बाहर फेंकने का काम कर सकता, यह बहुत ही नामुमकिन सी बात थी। वर्ण–श्रम के समाज में ऐसा काम केवल जमादारों का और कहीं कहीं चमारों का समझा जाता था।

गुरू नानक देव जी के आदेशा के अनुसार भाई लहणा जी ने बिना किसी संकोच के मरी हुई चुहिया उठा कर बाहर फैंक दी। इस प्रकार भाई लहणा जी ने गुरू आदेशों को मानने की सुंदर उदाहरण पेश की। मन की खोटी मति को त्याग कर लोक लाज की प्रवाह न कर के ही, गुरू की मति को उचित ढंग से ग्रहण किया जा सकता है। इस प्रकार भाई लहणा जी में जात–पात तथा छूआ छात के भूत का रह जाना असंभव था।

3. गुरू नानक देव जी के रावी नदी में स्नान की वार्ता

भाई लहणा जी गुरू नानक देव जी के साथ प्रात:काल में गुरू जी की सेवा के विचार से रावी नदी में स्नान करने के लिए जाते थे। बहुत से अवसरों पर इस समय गुरू नानक देव जी की सेवा में आप के दूसरे अनन्य सिख भाई बुड्ढा जी, भगीरथ जी, अजिता जी तथा साधारण जी भी जाया करते थे। एक बार ठंड का मौसम था। अति का जाड़ा पड़ रहा था। गुरू जी के साथ भाई लहणा जी तथा उपरोक्त प्रमुख सिख नदी रावी में स्नान करने गये। गुरू जी ने स्नान करने के लिए ज्यों ही रावी में प्रवेश किया, वर्षा आरंभ हो गयी और ओला वृष्टि होने लगी। बाकी सिख तो ऐसे समय पर आस–पास निकल गये पर भाई लहणा जी गुरू जी के वस्त्र छाती के साथ लगा कर, गुरू जी की सेवा में बाहर ही खड़े रहे। गुरू प्रेम में उनको अपना तथा अपने शरीर के बचाव का विचार बिल्कुल नहीं आया। भाई लहणा जी ने गुरगद्दी की ज़िम्मेवारी संभालने पर इस सिद्वांत के संबध में इस प्रकार वचन किये :

"आपु गवाइ सेवा करे, ता किछु पाऐ मानु ॥ "

इस घटना के द्वारा भाई लहणा जी ने निजित्व की भावना को गंवा कर सतगुरू की सेवा करने की बात न केवल स्वयं ही दृढ़ की बल्कि आने वाले समय के लिए सत्य के जिज्ञासुओं को निजित्व भावना गंवा कर सेवा करने का ढंग सिखलाने के लिए मानों अच्छे उदाहरण पेश कर दिये। गुरू नानक पातशाह की कठोर परीक्षाओं में से भाई लहणा जी जैसे कठोर परिश्रम के बिना पूरा उतरा भी नहीं जा सकता।

4. गंदगी भरे गड्ढ़े में से कटोरा निकालना

एक बार गुरू नानक देव जी का एक अति साधारण मूल्य का तांबे का कटोरा एक गंदगी वाल गड्ढ़े में गिर गया। गुरू नानक देव जी उसको बहुत आसानी से नज़र अंदाज कर सकते थे। गंदे कीचड़ तथा मैले से भरा हुआ गड्ढा इतना गंदा था कि किसी का उसके समीप जाना भी कठिन था। फिर गंदी जगहों पर इस प्रकृति के काम तो केवल सफाई कर्मचारियों (शूद्रों) को ही दिये जाते थे। गुरू नानक देव जी ने अपने अनेक सिखों तथा अपने सपुत्रों की उपस्थिति में इस गंदे गड्ढ़े में से अपना गिरा हुआ तांबे का कटोरा निकलवाने का इरादा प्रकट किया। सब को यह बात हास्याप्रद लग रही थी। कटोरा कोई विशेष मूल्य का तो था नहीं। सपुत्रों सहित कोई भी इस कार्य को करने को तैयार न हुआ। होता

भी कौन गंदगी की बदबू के कारण गड्ढ़े के समीप जाना भी दूभर था। सपुत्र बाबा श्री चंद तथा श्री लखमी दास ने किसी सफाई कर्मचारी (शूद्र) से इस काम को करवा लेने की राय दी तथा वह भी तब, जब गुरू नानक देव जी ने हर मूल्य पर गड्ढ़े में से उस कटोरे को निकलवाने का अपना दृढ़ निश्चय प्रकट किया। पर भाई लहणा जी को ज्यों ही गुरू नानक देव जी के इस आदेश व निश्चय की सूचना मिली, आप गंदगी की प्रवाह किये बिना, अपनी सामाजिक पोज़ीशन को पूरी तरह नज़र अंदाज़ करते हुए उस गड्ढ़े में से उस कटोरे को निकाल लाये और स्वयं नहा धो कर तथा कटोरा साफ़ कर के गुरू साहिब को प्रस्तुत कर दिया।

प्रश्न कटोरा निकालने का नहीं था। प्रश्न तो था कि अपनी खोटी मति (कुबुद्धि) को एक ओर रख कर, लोक लाज के विचार को तिलांजलि देकर जिज्ञासु ने किस प्रकार गुरू के आदेश को प्रसन्नापूर्वक मानना है। फिर गुरू नानक पातशाह की ओर से ली गयी यह परीक्षा तो भाई लहणा जी में से जाति--पात के भेद भाव की भावना को जड़ से ही समाप्त करती थी। **यदि भाई लहणा जी की आत्मिक उच्चता उस गड्ढ़े में उतर जाने से कम नहीं हुई थी, तो शूद्र श्रेणी अपने कारोबार के कारण अपवित्र कैसे हो सकती है ? काश ! आज हम भी गुरू के आदेशों को भाई लहणा जी की भांति सत्य-सत्य कर मान सकते।**

5. आधी रात को धर्मशाला की दीवार का निर्माण :

एक बार बहुत ठंडी रात थी। अर्द्धरात्रि के समय मूसलाधार वर्षा हो रही थी और बंद होने में ही नहीं आ रही थी। करतारपुर की धर्मशाला की दीवार गिर गयी। गुरू नानक देव जी जाग पड़े। उन्होंने बहुत ही आश्चर्यचकित कर देने वाला निश्चय तथा आदेश प्रकट किया। आप ने कहा कि "अभी ही रातों रात गिरी हुई दीवार का निर्माण करना है। एक तो शरद् ऋतु की इतनी ठंडी रात, दूसरे मूसलाधार वर्षा तथा ठंडी हवायें। ऐसी दशा में ठंडी मिट्टी का गारा बनाना और फिर दीवार बनाने का आदेश बड़ा अजीब था। वर्षा रुक जाने पर और दिन का प्रकाश हो जाने पर तो बात कुछ समझ आ सकती थी।

सभी अनसुना करके आगे पीछे हो गये। कुछ ने आदेश के औचित्य पर टिप्पणी भी की। गुरू साहिबान के अपने सपुत्र भी उन्हीं में थे, पर भाई लहणा जी ने तीन बार गिरी हुई दीवार को रातों रात बनाया, तीनों बार गिर गई। अंत में रातों रात चौथी बार दीवार बना कर ही उन्होंने दम लिया। रात भर तेज़ वर्षा की, शरीर को चीर देने वाली ठंडी हवा की तथा गीले गारे में हाथ ठिठुरने की उन्होंने परवाह न की। फिर यह काम तो मिस्त्री मज़दूरों का था।

यहां पर भी प्रश्न दीवार के निर्माण का नहीं था। प्रश्न था कि सतगुरू साहिबान के आदेश को मानने का। फिर आदेश भी ऐसा, जो बाहरी दृष्टि से ठीक प्रतीत नहीं होता था। आदेश पर टिप्पणी करना तो कहीं रहा, टाला तक नहीं और अविलंब बड़े चाव से इसे पूरा किया। आपने खुद आदेश माना और हमें रहती दुनियां तक के लोगों को गुरू आदेशों को मानने का उदाहरण प्रस्तुत किया।

6. आधी रात को कपड़े धोने का हुकम :

इसी प्रकार एक बार आधी रात को जाड़े के दिनों में गुरू नानक देव जी ने सो रहे भाई लहणा जी को जगा दिया और रावी नदी से कपड़े धो कर लाने का आदेश दिया। यदि अनजान दृष्टि से देखा जाय तो आदेश अनुचित प्रतीत होता था। पहली बात तो यह कि सोए हुए को असमय जगाया गया और दूसरे यह कि जाड़े की ऋतु, तीसरे रावी नदी का बर्फ जैसा ठंडा पानी और चौथे उसमें आधी रात को कपड़े धोने। फिर यह काम एक बढ़िया आर्थिक दशा वाले नौजवानों लोगों का नहीं, धोबियों का समझा

जाता था। पर धन्य हैं भाई लहणा जी, टीका-टिप्पणी का नाम ही नहीं। आपने बाद में स्वयं अपनी बाणी में फरमाया :

"सलामु जबाबु दोवै करै, मुंढहु घुथा जाइ ॥ "

यदि एक बार सतगुरू को देख परख कर धारण ही कर लिया है तो फिर नित्य प्रति उस के हर आदेशों को नये सिरे से क्यों परखा जाय ? हुक्म केवल माना ही नहीं, बल्कि बड़े चाव व खुशी से उसका पालन किया। इस आदेश पालन में न तो समझने की और न ही अहसान चढ़ाने की भावना थी। गुरू के आदेश को अपने मन की खुशी बना कर हुकम मानना केवल भाई लहणा जी का ही कार्य हो सकता है। फिर, इस घटना से गुरू नानक देव जी ने सुख आराम से रहने वाले स्वभाव के स्वामी भाई लहणा जी की, समाज के धोबी वर्ग, जिस को ब्राह्मण मत वालों ने शुद्र कहा था और जो अति सख्त परिश्रम कर रहा था, के साथ भी जान–पहचान करवा दी, ताकि शूद्र-शूद्र कह कर नफरत करने की जगह पर समाज में उनके लिए सहानुभूति पैदा हो सके।

7. बताओ कितनी रात गुजर गयी है ?

इस प्रश्न के उत्तर से ही पता चल जाता है कि भाई लहणा जी की मानसिक तथा आत्मिक अवस्था कहां तक पहुंच चुकी थी। प्रश्न बहुत सीधा, साधारण तथा स्पष्ट था। प्रश्न में कोई हेरफेर (टेढ़ापन) भी नहीं। पर यह प्रश्न काल-स्पष्ट विज्ञान का नहीं, आत्म–रस तथा ब्रह्म ज्ञान का था। वास्तव में बात तो यह है कि भाई लहणा जी के उत्तर की नकल मार कर भी शायद हमारे में से कोई एकाध ही प्रभु का कृपापात्र जीव इस प्रश्न का सही उत्तर दे सके।

एक बार बहुत रात बीतने पर गुरू नानक देव जी ने अपने निकटवर्ती सिखों–भाई बुड्ढा जी, भगीरथ जी, अजिता जी, साधारण जी, लहणा जी को प्रश्न किया कि बताओ कितनी रात गुज़र गयी है। उस समय काल-मापक घड़ियां तो नहीं बनी थीं, पर पुराने लोग तारों की छांव या दिशा से अंदाज़ा लगा कर समय बता दिया करते थे। भाई लहणा जी को छोड़ कर सब ने उत्तर दिया, दो या ढाई पहर रात बीत गयी है। काल-विज्ञान के अनुसार तो उत्तर ठीक था, पर ब्रह्मन ज्ञानी भाई लहणा जी यह उत्तर कैसे देते ?

आपने उत्तर दिया, "प्रभु (करतार) की रज़ा में जितनी रात बीतनी थी बीत गयी है और उसकी रज़ा में जितनी रात बाकी है, उतनी ही रहती है।" वास्तव में बात तो यह है कि भाई लहणा जी पूरी तरह गुरूतथा परमेश्वर की रज़ा से एकमेद हो चुके थे। कौन है जो भाई लहणा जी की इस अति ऊंची आत्मिक अवस्था की गहराई को पा सके ?

8. मुर्दा खाने का आदेश मानना

अंतिम परीक्षा के समय पर तो गुरू नानक देव जी ने अपने निकटवर्ती सिखों पर अति कठिन तथा विषम प्रश्न खड़ा कर दिया था। एक दिन सांसियों की भांति सतगुरू साहिबान ने कुछ कुत्ते इकट्ठे कर लिये, हाथ में डंडा पकड़ लिया, कंधे पर एक झोला डाल लिया। यदि कोई समीप आए तो उस को लट्ठ मारने का भय देते। इस अनोखे नाटक में सतगुरू जी रावी नदी के किनारे की ओर चल दिये। कई सिख उदास हो कर अपने घर वापिस जाने लगे, बहुत से डोल गये, कइयों ने श्रद्धा भरी बातें भी कीं। एक जगह पर सफेद कपड़े से मृतक शरीर की भांति कोई पदार्थ पड़ा था। बिल्कुल ऐसे प्रतीत होता था जैसे कोई मनुष्य मर गया हो और उस को अंतिम संस्कार से पूर्व सफेद कफ़न में लपेटा गया हो। पास ही गुरू नानक देव जी विराजमान थे। दूसरे निकटवर्ती सिख भी बाहर आ आ कर गुरू नानक देव जी के पास बैठते जाते थे। अचानक गुरू साहिब ने सिखों को आदेश दिया कि इस मुर्दे का सेवन करना है।

आगे बढ़ो। यह काम किसने करना था ? सभी लोग हैरान तथा परेशान ही नहीं, बल्कि भयभीत भी हो रहे थे। गुरू नानक साहिब से ऐसा आदेश होना हैरान करने वाली बात ही थी। मुर्दा सेवन करने का काम सब को परेशान तथा भयभीत कर रहा था। कुछ लोग सोच रहे थे कि यह आदेश क्यों दिया गया है और कई आदेश के औचित्य के बारे में विचार कर रहे थे। एक बात तो स्पष्ट थी कि भाई लहणा जी के अतिरिक्त कोई आगे नहीं आ रहा था और यदि किसी को इशारा भी किया गया तो उसने सिर फेर लिया। धन्य भाई लहणा जी थे और सचमुच सम्मान के पात्र थे, जिन्होंने आदेश के उचित-अनुचित होने के बारे में सोचा तक नहीं, गुरू पर सन्देह नहीं किया, पूर्ण प्रतीति तथा अगाध श्रद्धा में डूबे हुए आपने गुरू साहिब से पूछा कि मुर्दे को कौन सी तरफ से खाना शुरू करूं, पैरों की ओर से या सिर की ओर से ? पर वहां पर मुर्दा था कहां ? जैसे ही कपड़ा हटाया गया, नीचे कड़ाह-प्रशाद नज़र आया।

पर एक बात तो स्पष्ट है कि आदेश मानने के सिद्धांत के आदर्श की चर्म सीमा को छू लिया गया था। इस बात में कोई सन्देह नहीं। प्रश्न और परीक्षा, सीमा से अधिक कठिन थे।

उपयुक्त सभी घटनाओं से बिल्कुल स्पष्ट है कि भाई लहणा जी, गुरू नानक देव जी के साथ, चाहे कई सिखों के मुकाबले पर बहुत कम समय (7 साल तक) ही रहे, पर आप ने श्रद्धा, भक्ति, सुमिरन तथा गुरू प्यार के गुणों द्वारा गुरू नानक साहिब को पूरी तरह मोह लिया। आप वास्तव में विचारों तथा रहन सहन में साक्षात गुरू नानक का ही रूप बन गये थे। अपनी गुरू भक्ति, सेवा, सिमरन, नम्रता आदेश मानने आदि गुणों के कारण सतगुरू नानक देव जी की कृपा के पात्र बन गये। आप के तथा गुरू नानक देव जी के महान व्यक्तित्व में अंतर समझ पाना कठिन हो गया था।

3. गुरगद्दी की महान् ज़िम्मेवारी

पूर्ण तौर पर योग्य उत्तराधिकारी जांच कर साहिब सतगुरू नानक देव जी ने 2 सितम्बर सन् 1539 को भाई लहणा जी को गुरु अंगद का नाम दे कर, प्रमुख सिखों की उपस्थिति में, अपनी जगह पर धर्म प्रचार करने के लिए गुरगद्दी की महान् ज़िम्मेवारी सौंप दी। "अंगद" शब्द से तात्पर्य भी "गुरु नानक के शरीर का अंग" था और उस में "नानक" नाम की ही छाप रही। स्पष्ट ही है कि आप गुरु नानक का रूप ही बन गये थे। गुरगद्दी की ज़िम्मेवारी देते समय गुरु नानक देव जी ने बाणी का वह संग्रह भी गुरु अंगद देव जी को सौंप दिया जिस में आप की अपनी बाणी तथा अन्य भक्तों, की बाणी,(फरीद जी, कबीर जी, नामदेव जी, रविदास जी, आदि भक्तों की बाणी) भी शामिल थी। इस से पांच दिन के पश्चात् 7 सितम्बर सन् 1539 को गुरु नानक देव जी स्वयं ज्योति में विलीन हो गये।

सिख मत में गुरगद्दी की ज़िम्मेवारी।

सिख मत में गुरद्दी बड़े पुत्र को या संतान को विरासत में मिलने वाली चीज़ नहीं थी। यह किसी सीमा तक गुणों के आधार पर पहले सतगुरू साहिबान से कृपा के रूप में मिली हुई निधि थी। यह पूजा करवाने वाला सिंहासन नहीं था, बल्कि संपूर्ण मानवता को परमेश्वर की रचना के साथ जोड़ने के लिए दिन–रात एक करके मार्ग दर्शन करने तथा धर्म प्रचार करने की महान्ज़िम्मेवारी थी। लोकतंत्रीय तरीके से या सर्वसम्मति के प्रभाव से भी यह ज़िम्मेवारी किसी को नहीं दी जा सकती थी और न ही कोई राज्यबल द्वारा इस पद को पा सकता था। यह तो एक ज़िम्मेवार सतगुरू की ओर से, पूर्ण ज़िम्मेवारी से परख कर पूर्ण भरोसे योग्य, अधिकारी व्यक्ति को मिलने वाली महान निधि थी, जो ज़िम्मेवारियों तथा केवल जिम्मेवारियों से भरपूर थी।

बाबा श्री चंद एक बहुत पवित्र जीवन वाले धर्मात्मा पुरुष थे। वे समाज के एक बहुत बड़े वर्ग में सम्मानित व प्रतिष्ठित थे। वैसे उनका रास्ता गुरू नानक पातशाह के मत से काफी हटकर था। सिख

धर्म में, मनुष्य को त्याग के नाम पर जीवन से तोड़ कर, घर बार तथा गृहस्थ धर्म छोड़ कर, साधु मलंग बनने की प्रेरणा नहीं दी गयी, बल्कि इस में श्रम करने, बांट कर खाने तथा प्रभु का जाप करने की सादी तथा आदर्श जीवन युक्ति के द्वारा जीवन व्यतीत करने की विधि बतायी गयी है। इतिहास में यह भी वर्णन आता है कि बाबा श्री चंद जी गुरू नानक साहिब की गद्दी के लिए बहुत इच्छावान नहीं थे। पर उनके अपने कई श्रद्धालु उन को गुरू नानक देव जी का बड़ा सपुत्र होने के कारण गुरगद्दी पर बिठाना चाहते थे। ऐसे लोगों द्वारा विरोध स्वाभाविक था। सभी स्थितियों को ध्यान में रख कर ही गुरू नानक देव जी ने स्वयं ही गुरू अंगद देव जी को करतारपुर की अपेक्षा खडूर में अपने प्रचार का मुख्य केन्द्र बनाने का आदेश दिया था। ठीक है, इसके कुछ और कारण भी थे। चनाब नदी से पार के क्षेत्र को मुसलमान बहुत सीमा तक इस्लाम के घेरे में ला चुके थे। करतारपुर के सिखी केन्द्र ने रावी के उत्तर वाली दिशा में प्रचार करके इस्लाम के प्रसार को रोक दिया था और गुरू नानक देव जी ने अब गुरू अंगद देव जी को रावी तथा ब्यास के बीच के क्षेत्र, माझा को संभालने की राय दी थी। इसलिए खडूर का केन्द्र बहुत उपयुक्त था।

गुरू अंगद देव जी अपने गुणों, स्वभाव, आशय, एवं आदर्शों आदि के दृष्टिकोण से गुरू नानक साहिब के बिल्कुल अनुकूल थे और गुरू नानक साहिब जैसे पूर्ण व्यक्तित्व ने स्वयं परख कर ही उन्हें अपना सुयोग्य उत्तराधिकारी नियुक्त किया था। गुरू नानक साहिब का यह निर्णय तथा चुनाव सिखी के लिए कितना उपयुक्त व लाभदायक सिद्ध हुआ, यह बात तो गुरू अंगद देव जी के सन् 1539 से 1552 तक के गुरगद्दी-काल में किये गये कार्यों से भली-भांति प्रकट हो जाती है। गुरगद्दी मिलने पर बाबा श्री चंद तथा लक्ष्मी दास जी ने काफी बुरा मनाया पर यदि गुरू अंगद साहिब जैसी पवित्र, सादा, निष्काम तथा क्षमा, भक्ति, सहनशीलता आदि गुणों से भरपूर महान परोपकारी हस्ती गद्दी पर विराजमान न होती तो ऐसे रोष तथा विरोध के कारण सिख जत्थेबंदी बिखर सकती थी।

सरदार खुशवंत सिंघ ने **"ए हिस्टरी ऑफ दा सिखस"** (A History of The Sikhs) में गुरू अंगद देव जी के चुनाव का, एक अन्य पक्ष से लाभकारी होना प्रकट किया है। वे लिखते हैं–

"An additional factor in prefering Lehna was the fact that he had a sizeable following of his own which he was gradually bringing into the sikh fold."

अर्थात् "एक और बात जो भाई लहणा जी के पक्ष में जाती थी वह थी उनके बहुत से अपने सेवक, जिनको वे शनै: शनै: सिख धर्म की परिधि में ला रहे थे।

गुरू अंगद देव जी के गुरगद्दी के लिए चुनाव के पीछे यह कारण रहा हो, इससे तो हम बिल्कुल ही सहमत नहीं हैं। गुरगद्दी के चुनाव का कारण तो सीधा और स्पष्ट है कि आप गुरू नानक पातशाह की परख की कसौटी पर बिल्कुल पूरे उतरे थे और गुरू नानक देव जी की गद्दी के उत्तराधिकारी बनने के बिल्कुल योग्य थे। यह बात अलग है कि गुरू अंगद देव जी की देवी भक्त टोली के नेता होने वाली पृष्ठि भूमि ने देवी भक्ति के खोखलेपन को प्रकट करने और सिखी का दायरा बढ़ाने में सहयोग मिला हो। इस संबंध में भाई गुरदास जी ने गुरू अंगद देव जी के महान व्यक्तित्व को बहुत अच्छे शब्दों में प्रस्तुत किया है और स्पष्ट किया है कि सिखी में गुणों का ही सांझापन है। भाई लहणा जी गुरू नानक देव जी के सम्पर्क में आ कर बिल्कुल इस प्रकार गुरू नानक का रूप बन गये थे जैसे पारस तथा चंदन के छू जाने से साधारण पत्थर पारस, तथा साधारण लकड़ी चंदन बन जाती है, या जैसे दीपक से दीपक प्रकाशमान

हो जाता है। सन्देह नहीं कि गुरू नानक तथा गुरू अंगद के शरीर अलग अलग थे परन्तु दोनों की ज्योति तथा जीवन जुगत तो एक सी थी। यथा :—

"पारस होइआ पारसहुं, सतिगुर परचे सतिगुर कहिणा ॥
चंदन होईआ चंदनहुं, गुर उपदेश रहित विच रहिणा ॥
जोति समाणी जोति विच, गुरमति सुख दुरमति दुख दहिणा।
अचरज नूं अचरज मिलै, विसमादे विसमाद समहिणा ॥
अपिउ पीण, निझर झरन, अजर जरन, असहन सहिणा ॥
सच समाणा सच विच, गाडी राह साध संग वहिणा ॥
बाबाणै घरि चानण लहिणा ॥ " [वार २८ पः ६]

"थापिआ लहिणा जींवदे, गुरिआई सिर छत्र फिराइआ ॥
जोती जोति मिलाइ कै , सतिगुर नानक रूप वटाइआ ॥
लख न कोई सकई, आचरजे आचरज कराइआ ॥
काइआ पलट सरूप बणाइआ ॥ [वार १ पः ४५]

"सो टिका सो छत्र सिर सोई सचा तख्त टिकाई ॥
गुर नानक हंदी मोहर हथ, गुर अंगद दी दोही फिराई।
दिता छड करतारपुर, बैठ खडूरे जोति जगाई ॥
जंमे पूरब बीजिआ, विच विच होर कूड़ी चतुराई ॥ "

"गुरू अंगद गुर अंग ते, अंमृत विरख अंमृत फल फलिआ ॥
जोती जोति जगाईअनु, दीवे ते जिउ दीवा बलिआ ॥
हीरै हीरा वेधिआ, छल कर अछली अछल छलिआ ॥
कोई बुझ न हंघई पाणी अंदर पाणी रलिआ ॥ "

गुरू अंगद देव जी के महान् व्यक्तित्व तथा गुणों पर भट्ट कलसहार, जिनके दूसरे नाम कल तथा टल भी हैं) गुरू अंगद देव जी के महान् व्यक्तित्व तथा गुणों पर बहुत सुंदर शब्दों में प्रकाश डाला है :—

"अमिअ द्रिसटि सुभ करै, हरै अघ पाप सकल मल ॥
काम क्रोध अरु लोभ मोह, वसि करै सभै बल ॥
सदा सुखु मनि वसै, दुख संसारह खोवै ॥
गुरु नवनिधि दरिआउ, जन्म हम कालख धोवै ॥
सु कहु टल गुर सेवीऐ, अहिनिसि सहजि सुभाइ ॥
दरसनि परसिऐ गुरू कै, जनम मरण दुखु जाइ ॥

अर्थात् गुरू अंगद देव जी जिस मनुष्य पर भी अपनी अमृत दृष्टि करते हैं, उसके सभी पाप व विकारों की सभी प्रकार की मैल दूर कर देते हैं और काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार सब उसके वश में कर देते हैं। गुरू अंगद देव जी के अपने मन में सदा कायम रहने वाला स्थायी सुख बसता है तथा वह सांसारिक दुख दूर कर देते हैं। गुरू अंगद रूपी समुद्र ही मानों नौ-निधियां हैं और गुरू अंगद जी हमारे जन्मातरो की कालिख धो देते हैं। कलसहार जी कहते हैं कि ऐसे गुरू अंगद देव जी की आत्मिक अडोलता तथा श्रद्धा-भावना में अविधिछ सेवा करनी चाहिए क्योंकि ऐसे गुरू के दर्शन करने से जन्म–मरण का दुःख दूर हो जाता है।

राय बलवंड और सत्ते डूम की वार से भी गुरू अंगद देव जी के व्यक्तित्व तथा जीवन इतिहास के बारे में कुछेक तथ्य मिल जाते हैं जिन्हें संक्षिप्त में इस प्रकार कलमबंद किया जा सकता है।

1. गुरू अंगद सदा ईश्वरीय नाम का अमृत पिया करते थे।

2. गुरू नानक देव जी ने अपने जीवन काल में ही गुरू अंगद देव जी को गुरगद्दी दी तथा स्वयं भी उनको प्रणाम किया। गुरू अंगद देव जी में गुरू नानक देव जी की ही ज्योति तथा उनकी ही जीवन जुगती था। वास्तव में केवल शरीर ही बदला हुआ था। गुरू अंगद देव जी ने सदा वही कुछ ही किया जो गुरू नानक देव जी ने चाहा तथा फुरमाया। आप गुरमत प्रचार का कड़ा परिश्रम करते रहे।

3. गुरू अंगद देव जी के दर्शन तथा संगत करने से जीवों की जन्मों–जन्मों की मैल उतरों जाती है।

4. गुरू अंगद देव जी ने गुरू नानक देव जी का हर वचन सत्य करके माना। गुरू नानक देव जी के सपुत्रों ने गुरू नानक देव जी के वचन नहीं माने थे। नम्रता धारण करके आपने हुकम मानने का कार्य किया था। गुरू अंगद देव जी मर्दों जैसा कठोर परिश्रम करके ही गुरू नानक के दर पर स्वीकार्य हुए थे। गुरू नानक देव जी ने भाई लहणा जी के व्यक्तित्व की बहुत कठोर परीक्षा कर ली थी तथा पूरा उतरने पर ही आपको गुरगद्दी की ज़िम्मेवारी प्रदान की थी। इससे पूर्व गुरू नानक देव जी ने अपने सभी सिखों तथा अपनी संतान की भी परीक्षा ली थी, पर इस परीक्षा में केवल गुरू अंगद देव जी ही पूरे उतर सके थे।

5. गुरू अंगद देव जी के महल (पत्नि) माता खीवी जी एक बहुत नेक तथा उच्च आत्मा थी। आप गुरू घर के सेवकों को मां की तरह सुख देने वाली थीं। गुरू के लंगर का आप बहुत सुंदर प्रबंध किया करती थीं।

राय बलमंड तथा सत्ते डूम की वार में गुरू अंगद देव जी के महान् व्यक्तित्व के बारे में उच्चारित पउड़िया सविस्तार अनुवाद सहित नीचे अंकित की जाती हैं ताकि गुरु अंगद देव जी का महान् व्यक्तित्व पूरी तरह स्पष्ट हो जाये तथा साथ ही सिखी में गुरू के 'ज्योति तथा जुगत' के सभी 'अवतार धारण करने में जामों' गुरू शरीरों में एकता होने की बात भी समझ में आ सके। याद रहे, यह वार गुरू ग्रंथ साहिब के राग रामकली में पृष्ठ 966 से 968 तक दर्ज है तथा गुरू अंगद देव जी के जीवन से संबंधित एक सविस्तार इतिहासिक अभिलेख है।

नाउ करता कादर करे, किउ बोलु होवै जोखीवदै।
दे गुना सति भैण भराव है, पारंगति दानु पड़ीवदै ॥
नानकि राजु चलाइआ, सचु कोटु सताणी नीवदै ॥
लहणे धरिओनु छतु सिरि, करि सिफती अंम्रितु पीवदै ॥

मति गुर आतम देव दी, खड़गि जोरि पराकुइ जीअदै ॥

गुरि चेले रहिरासि कीई, नानकि सलामति थीवदै ॥

सहि टिका दितोसु जीवदै ॥ १ ॥

[भावार्थ] बलवंड जी गुरू नानक देव जी की स्तुति में कहते हैं कि जिस का नाम, कर्त्ता स्वयं ऊंचा करता है, उस को तोलने के लिए वचन क्यों कर हो सकते हैं। सत्य आदि दैवी गुण तो गुरू जी के बहन भाई हैं जो संसार समुद्र से पार हो सकने वाली अवस्था प्राप्त करवाते हैं। गुरू नानक ने सत्य रूपी किले की बहुत मज़बूत आधारशिला रख कर, धर्म का राज्य चला दिया है।

स्तुति करके नाम अमृत पीने वाले लहणा जी के सिर पर गुरू नानक ने गुरिआई का सम्मान दे दिया है। गुरू अकाल पुरख की मति रूपी खड़ग के बल द्वारा जीवन दे कर गुरिआई का यह सम्मान दिया। जीवनकाल में ही गुरू नानक देव जी ने अपने सिख भाई लहणा जी को गुरू पद सौंप दिया और स्वयं उन्हें प्रणाम किया। यथा :

लहणे दी फेराईऐ, नानका दोही खटीऐ ॥

जोति ओहा, जुगति साइ, सहि काइआ फेरि पलटीऐ ॥

झुलै सु छतु निरंजनी, मलि तखतु बैठा गुर हटीऐ ॥

करहि जि गुर फुरमाइआ, सिल जोगु अलूणी चटीऐ ॥

लंगर चलै गुर सबदि, हरि तोटि न आवी खटीऐ। ।

खरचे दिति खसंम दी, आप खहदी खैरि दबटीऐ ॥

होवै सिफति खसंम दी, नूर अरसहु कुरसहु झटीऐ ॥

तुधु डिठै सचे पातिसाह, मलु जनम जनम दी कटीऐ ॥

सचु जि गुरि फुरमाइआ, किऊ एदू बोलहु हटीऐ ॥

पुत्री कऊलु न पालिओ, करि पीरहु कंन्र मुरटीऐ ॥

दिलि खोटै आकी फिरनि बनि भारु उचाइन छटीऐ ॥

जिनि आखी, सोई करे, जिनि कीती तिनै थटीऐ ॥

कऊणु हारे, किनि उवटीऐ ॥ २ ॥

[भाव] भाई लहणा जी को गुरगद्दी मिलने के कारण गुरू नानक के देह की भांति लहणा जी की देह परिवर्तित हो गई और संसार में फैल गई। लहणा जी में गुरू नानक वाली ही ज्योति थी, 'जीवन जुगत' भी गुरू नानक वाली ही थी। मालिक गुरू ने केवल काया ही पलटी थी। भाई लहणा जी के सिर पर सुंदर निरंजनी छत्र झूल रहा है और भाई लहणा जी गुरू नानक के हाट के जानों सिंहासन पर बैठ गये हैं। भाई लहणा जी वहीं काम करते हैं जो गुरू ने फुरमाये हैं और मानों इस गुरमत जोग की फीकी सिल्ली को चाटते हैं।

गुरू के शब्द के द्वारा नाम का लंगर चल रहा है, पर भाई लहणा जी की नाम की कमाई में कोई कमी नहीं पड़ती। लहणा जी प्रभु नाम की निधि बांट रहे हैं। आप स्वयं भी इस निधि का उपयोग कर

रहे हैं। भाई लहणा जी के दरबार में मालिक प्रभु की स्तुति हो रही है और ब्रह्मांड में से नाम का प्रकाश आ रहा है। हे सच्चे पातशाह, गुरू अंगद जी तुझे देख कर जन्म-जन्म के विकारों की मैल कट जाती है।

हे गुरू अंगद देव जी आप ने उस बात को सत्य माना जो गुरू नानक ने कहीं। इस वचन से आप हटते भी क्यों ? गुरू नानक देव जी के पुत्रों ने गुरू नानक के वचनों का पालन नहीं किया और वे पीर की ओर पीठ दे कर उनके वचनों को नकारते रहे। जो लोग खोटे दिल से गुरू से मुह मोड़े फिरते हैंवे माया के धंधों के प्रभाव का भार उठाये फिरते हैं। जिस गुरू नानक ने इस आदेश की बात कही, वही हुकम में चलने का काम कर रहा है और जिसने इस हुकम का खेल रचाया है, यह उसी को शोभा देता है। देखना तो यह है कि हुकम के खेल से बागी होकर कौन हारता है और हुकम के खेल को मान कर कौन जीवन की बाज़ी पर विजय पाता है।

"जिनि कीती सो मंनणा, को सालु, जिवाहे साली ॥
धरम राइ है देवता, लै गला करे दलाली ॥
सतिगुर आखै सचा करे, सा बात होवै दरहाली ॥
गुर अंगद दी दोही फिरी, सचु करतै बंधि बहाली ॥
नानकु काईआ पलटु करि, मलि तखतु बैठा सै डाली ॥
दर सेवे उमति खड़ी, मसकलै होई जंगाली ॥
दरि दरवेसु, खसंम दै, नाइ सचै बाणी लाली ॥
बलवंड, खीवी नेक जन, जिसु बहुती छाउ पत्राली ॥
लंगरि दउलति वंडीऐ, रसु अम्रितु, खीरि घिआली ॥
गुरसिखा के मुख उजले, मनमुख थीए पराली ॥
पए कबूलु खसंम नालि, जां घाल मरदी घाली ॥
माता खीवी सहु सोई, जिनि गोइ उठाली ॥ ३ ॥

भाव, जिस ने नम्रता में रह कर हुकम मानने का काम किया है वही गुरू अंगद आदर योग्य बना। श्रेष्ट कौन है ? ऊँचे टिब्बे पर उगने वाल कांटेदार नामकनी या नीची जगह पर उगने वाली धान ? भाव धान नम्रता का द्योतक, नीचेपन के कारण श्रेष्ठ है। नम्रता के कारण गुरू अंगद धर्म का देवता बन गया है जो जीवों की बातें सुन कर परमात्मा के साथ जोड़ने का काम कर रहा है। जो बात भी सतगुरू अंगद कहता है वही बात तुरंत हो जाती है। गुरू अंगद की महानता की धूम मच गयी है और यह देही परमेश्वर ने स्वयं बांध कर टिका दी है।

सैंकड़ों सिखों-रूपी शाखाओं वाला गुरू नानक, काया पलट कर, सिंहासन पर संभाल कर, बैठ गया है। गुरू अंगद के दर की उसकी उम्मत प्रेम भावना से सेवा कर रही है तथा इस प्रकार सेवा रूपी कपड़े (झाड़न) से अपनी ज़ंग लगी हुई आत्मा को साफ़ कर रही है। गुरू अंगद मालिक प्रभु के दर का दरवेश है तथा प्रभु के नाम के कारण उसके मुख पर जलाल बना हुआ है। बलवंड जी कहते हैं कि माता खीवी जी एक नेक स्त्री है, जो सिख सेवकों पर सघनी छाया किये हुए हैं। गुरू अंगद देव जी के सत्संग रूपी लंगर में नाम की दौलत बांटी जाती है। ऐसे ही माता खीवी जी की ओर से अमृत रस से भरपूर घी वाली खीर बांटी जाती है। गुरसिखों के मुंह तो खिले हुए हैं पर मनमुख ईर्ष्या के कारण पीले पड़े हुए हैं।

अपने मालिक गुरू नानक के सम्मुख गुरू अंगद तभी स्वीकार्य हुए जब उन्होंने मर्दों वाला कड़ा परिश्रम किया। माता खीवी का ही पति है जिस ने सारी धरती का भार उठा लिया है।

"होरिओ गंग वहाईऐ, दुनिआई आखै कि किओनु ॥
नानक ईसरि जगनाथि, उचहदी वैणु विरिकिओनु ॥
माधाणा परवतु करि नेत्रि बासुक, सबदि रिड़किओनु ॥
चउदह रतन निकालिअनु, करि आवागउणु चिलकिओनु ॥
कुदरति अहि वेखालीअनु, जिणि ऐवड पिंड ठिणकिओनु ॥
लहणे धरिओनु छत्र सिरि, असमानि किआड़ा छिकिओनु ॥
जोति समाणी जोति माहि, आपु आपै सेती मिकिओनु ॥
सिखां पुत्रां घोखि कै, सभ उमति वेखहु जि किओनि ॥
जां सुधोसु तां लहना टिकिओनु ॥ ४ ॥

[भावार्थ] डूम ः ति के सत्ता जी कहते हैं कि गुरू नानक देव जी ने एक प्रकार से दूसरी ओर से ही गंगा चला दी है इस को देख कर दुनियां हैरान हो कर कहती है कि गुरू नानक ने यह क्या कमाल कर दिया है। जग (गुरू, गुरू नानक ने सीमा से परे उच्च वचन कहा है। गुरू नानक ने ऊंची सुरति रूपी पर्वत को बिलौना बनाया है, मन रूपी नाग को मिट्टी के घड़े में डाल कर परमेश्वर के शब्द रूपी सागर को बिलोआ है। प्रभु की स्तुति रूपी चौदह रत्न इस शब्द सागर में से निकाल लिये और इस प्रकार इस संसार को प्रकाशमयी बना दिया।

गुरू नानक ने ऐसी कमाल की करामात दिखाई कि उन्होंने भाई लहणा जी जैसे महान शरीर को अच्छी तरह ठुनका कर देखा और फिर लहणा जी के सिर पर गुरगद्दी का छत्र रख दिया और उन की शोभा आसमान तक खींच दी। गुरू नानक की ज्योति भाई लहणा जी की ज्योति में इस तरह मिल गयी कि गुरू नानक ने अपने आप को भाई लहणा जी के बराबर कर लिया। सत्ता जी संगत को संबोधित करके कहते हैं कि हे संगत ! आप देखो जो कुछ गुरू नानक ने किया है। जब उसने अपने सभी सिखों तथा पुत्रों की परख करके अपना उत्तराधिकारी ढूंढा तो केवल भाई लहणा जी ही सामने आये।

फेरि वसाइआ फेरुआणि सतिगुरि खाडूरु ॥
जपु तपु संजमु नालि तुधु, होर मुचु गरूरु ॥
लबु विणाहे माणसा, जिऊ पाणी बूरु ॥
वरिऐ दरगह गुरू की कुदरती नूर ॥
जितु सु हाथ न लभई, तू ओहु ठरूर ॥
नउनिधि नामु निधानु है, तुधु विचि भरपूर ॥
निंदा तेरी जो करै, सो वंञै चूर ॥
नेड़ै दिसै मात लोक, तुधु सुझै दूर ॥
फेरि वसाई फेरु आणि, सतिगुरि खाडूर ॥ ५ ॥

[भावार्थ] डूम सत्ता जी कहते हैं कि गुरगद्दी मिलने पर करतारपुर छोड़ कर फेरू-सुत सतगुरू भाई लहणा जी ने फिर दुबारा खडूर नगर को आ बसाया या अपने निवास दूरा इस स्थान को पवित्र किया। हे लहणा जी! तेरे पास तो जप, तप और संयम के गुण रहे और निंदा करने वालों ने भारी अहंकार को ही अपनाया।

लोभ मनुष्य के आत्मिक जीवन का ऐसे ही विनाश करता है जैसे पानी को बूर खराब करता है, पर गुरू के दरबार में तो प्रभु के नाम का स्वाभाविक नूर ही बरसता है। हे भाई लहणा जी! तूं वह शीतल सागर है, जिस की शीतलता की गहराइयों को मापा नहीं जा सकता। प्रभु के नाम-निधान रूपी नौ-निधियां तेरे हृदय में भरपूर हैं। तेरी निंदा करने वाले स्वयं ही चूर-चूर हो जाते हैं। सांसारिक जीवों को तो नज़दीक का एक पदाथक रूपी संसार, मात लोक ही दिखाई देता है जब कि तुम्हें इस दृष्टमान जगत से दूर का ज्ञान भी हो रहा है। इस प्रकार फेरू-सुत सतगुरू भाई लहणा जी ने फिर आ कर खडूर को पवित्र किया।

गुरू नानक देव जी की ओर से इस ढंग से ज्योति तथा जुगत की एकता को कायम रख कर केवल गुरू नानक से गुरू अंगद के शरीर पलटने की बात को विद्वानों तथा इतिहासकारों ने काफी महत्त्व दिया है। चार्ल्स ने गुरू नानक देव जी से गुरू अंगद जी को धर्म के प्रकाश की ज्योति सौंप देने को उस विश्वास की परिपक्वता माना है जिस के अनुसार यह धर्म सदा कायम रहने वाली एक वास्तविकता थी। गुरगद्दी की ज़िम्मेवारी इस ढंग से सौंपने को आर्च धर्म प्रचार के लिए बहुत ही ठोस कार्य मानता है। श्री गोकुल चंद नारंग ने गुरगद्दी की ज़िम्मेवारी को इस ढंग से आगे सौंपे जाने की तुलना एक पौधे के विकास से की है जिस को अलग-अलग व्यक्ति बीजते हैं, सींचते हैं, पालते हैं, रक्षा करते हैं तथा फल प्राप्त करते हैं। इंदू भूषण बैनर्जी ने भी गुरू अंगद देव जी को गुरिआई मिलने की घटना को, इतिहास की बड़ी महत्त्वपूर्ण तथा अर्थपूर्ण घटना बताया है।

4. गुरू अंगद देव जी के समय की राजनीतिक दशा

गुरू अंगद देव जी की संपूर्ण जीवन गाथा की घटना का समय सन् 1504 से 1552 तक का है। गुरू अंगद देव जी के जीवन वृतांत को समझने के लिए उस समय के दौरान देश में प्रचलित राजनीतिक दशा की कुछ चर्चा कर देना उचित प्रतीत होता है।

सोलहवूं शताब्दी के आरंभ में पंजाब, दिल्ली के शासन का ही एक अंग था तथा इस पर सिकंदर लोधी का राज्य था। इस ने सन् 1488 से सन् 1517 तक राज्य किया था। यह एक मज़बूत, बहादुर तथा न्यायप्रिय बादशाह था। यह बात अलग है कि उसका न्याय भी समाज के केवल एक वर्ग मुसलमानों तक ही सीमित था। हिंदुओं पर ज़ोर ज़बरदस्ती को तो वह बुरा नहीं समझता था।

सुल्तान सिकंदर लोधी की मृत्यु के पश्चात् उस का पुत्र इब्राहीम लोधी, दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। इस बादशाह के बारे में बाबर ने लिखा है कि यह एक बहुत निकम्मा शासक था। यह बिना किसी योजना के आक्रमण कर दिया करता तथा बिना किसी युद्धनीति व योजना के मैदान छोड़ जाता था। वास्तव में लोधी साम्राज्य का यह अयोग्य उत्तराधिकारी था। इस के शासन के दौरान सभी ओर बगावतों का बोलबाला था। इस की हकूमत कहने को तो जेहलम के किनारे, भेरे से लेकर बिहार तक फैली हुई थी, पर इस का नियंत्रण या प्रभाव प्राय: समाप्त हो चुका था। चित्तौड़, विजय निगर, बंगाल मालवा, गुजरात, काठियावाड़ आदि अब नाम मात्र के ही उसके नियंत्रण में थे।

उस समय पंजाब कई सूबों में बंटा हुआ था जैसे लाहौर, मुल्तान, सरहिंद, दीपालपुर तथा सुल्तानपुर। छोटे सूबे या परगने कई बार सीधे दिल्ली के शासक के अधीन हुआ करते थे और कई बार दो तीन छोटे सूबे एक ही हाकिम के अधीन कर दिये जाते थे।

पंजाब को सैनिक महत्त्व वाला सूबा समझ कर सिकंदर लोधी ने अपने निकटवर्ती संबंधी तातार खां को पंजाब के सभी सूबों तथा परागनों के लिए निगरान नियुक्त किया हुआ था। तातार की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र दौलत खां इस पद का अधिकारी बना। सिकंदर की मृत्यु तक तो दौलत खां दिल्ली शासन का वफादार रहा, पर सन् 1517 में सिकंदर की मृत्यु के पश्चात् यह अपने पुत्रों-ग़ाज़ी खां, हाजी खां तथा दिलावर खां सहित पंजाब को दिल्ली से आज़ाद कर अपने अधीन करने की साज़िशों में व्यस्त हो गया। उधर इब्राहीम का चाचा आलम खां उर्फ अलाऊदीन लोदी, इब्राहीम से दिल्ली का सिहासन छीनने की साज़िशें बना रहा था। अत: दौलत खां तथा आलम खां में इब्राहीम लोदी के विरुद्ध गठजोड़ होना स्वाभाविक था। हर कोई अपनी स्वार्थसिद्ध में ही लगा हुआ था। दौलत खां बहुत चालबाज़ हाकिम था। वह बहुत तेज़ी से अपने आप को आज़ाद शासक के तौर पर देखना चाहता था। पठान सरदारों में हर ओर फूट ही फूट पड़ चुकी थी।

सन् 1504 में बाबर ने पंजाब की सीमा पर आक्रमण कर दिया तथा केहाट पर कब्जा कर लिया। फिर 1519 ई० में उसने भेरे पर कब्ज़ा कर लिया और अगले साल स्यालकोट पर आक्रमण कर दिया। बाबर के रोजनामचों के अनुसार उसने 1519 से 1525 तक पंजाब पर पांच आक्रमण किये। चालबाज़ दौलत खां ने अपने पुत्र दिलावर खां को बाबर के पास सहायता का आश्वासन देने को भेजा। पठानों की इस फूट से बाबर ने पूरा लाभ उठाया और उसने सन् 1524 में एक बार फिर दिल्ली तथा पंजाब पर विजय पाने के लिए आक्रमण कर दिया। दिल्ली से बिहार खां की कमान में शाही फौज भी दौलत खां के विरूद्ध पहुंच गई थी। पर बाबर ने दिल्ली की सैना को खूब मुँह तोड़ उत्तर दिया। उसने पंजाब से खूब लूटमार की तथा लाहौर, दीपालपुर तथा जालंधर को बुरी तरह तबाह किया।

दौलत खां दिल का साफ नहीं था। जुबान से फिर जाना उसके लिऐ कोई बड़ी बात नहीं थी। जब उसकी आशा के विपरीत बाबर ने सारे पंजाब की जगह उस को केवल दोआबा जालंधर तथा सुल्तानपुर का क्षेत्र दिया तो उस ने बाबर के विरुद्ध साज़िशें आरंभ कर दीं। बाबर से इस ने बगावत सी ही कर दी। बाबर ने उस की जगह उसके पुत्र दिलावर खां को सुल्तानपुर तथा जालंधर-दोआबे की नवाबी दे दी तथा दौलत खां तथा उसका दूसरा पुत्र गाज़ी खां पहाड़ों की ओर भाग गये। पंजाब के अलग-अलग परगनों को उसने अपने अलग-अलग मुग़लों तथा वफादार पठान सरदारों को सौंप दिया।

बाबर को वापिस काबुल जाना पड़ गया। दौलत खां ने उसके जाने के कुछ दिन पश्चात् ही उसके द्वारा नियुक्त आलम खां से दीपालपुर छीन लिया और इब्राहीम लोदी की सेनाओं को, जो पंजाब में अपना प्रभाव कायम करने के लिए दिल्ली से आई थीं, को भी बुरी तरह पराजित किया। आलम खां काबुल बाबर के पास दौड़ गया। दोनों में समझौता हो गया कि बाबर, आलम खां को दिल्ली का सिंहासन प्राप्त करने में सहायता करेगा तथा इस के बदले में पंजाब को पक्के तौर पर बाबर सौंप कर दिया जायेगा। बाबर ने पंजाब बैठे अपने सभी मुग़ल सरदारों को आलम खां की सहायता करने का निर्देश दिया। आलम इस समय इब्राहीम के विरुद्व दौलत खां से भी सहायता लेने में कामयाब हो गया। इब्राहीम लोधी तथा आलम खां लोदी में बहुत घमासान युद्व हुआ जिसमें आलम खां की किस्मत ने साथ न दिया। बाबर के मुग़ल सरदारों का प्रभाव भी चूर हो गया। अब दौलत खां ने अवसर का लाभ उठा कर बचे खुचे मुग़ल सरदारों को भी पंजाब में से भगा दिया।

मुग़लों की इस पराजय ने बाबर को काबुल कंधार का प्रबंध पक्का कर के नवंबर 1525 में हिंदुस्तान पर अपना पांचवां तथा अंतिम आक्रमण करने के लिए तैयार कर दिया। दौलत खां लाहौर से भागनिकला तथा होशियारपुर के किले मलौत में जा शरण ली। दौलत खां ने यहां बाबर की सैना के साथ जान तोड़ टक्कर ली। पर अंत में वह बाबर से हार गया और उसकी अधीनता स्वीकार करने को मजबूर हुआ।

बाबर ने उस को भेरे के किले में नज़रबंद करने के लिए भेज दिया तथा उसकी जागीर उसके परिवार के नाम लगा दी, पर दौलत खां रास्ते में ही मर गया।

बाबर अपनी सैनायें लेकर दिल्ली की ओर रवाना हो गया। उधर से इब्राहीम अपनी सेना ले कर सामना करने के लिए पानीपत के ऐतिहासक मैदान में जा उतरा। दोनों सेनाओं में सन् 1526 में भारी निर्णायक युद्ध हुआ जिस में बाबर की विजय के कारण हिंदुस्तान स्थाई तौर पर मुग़लों के हाथों में आ गया तथा हिंदुस्तान की राजनीति ने एक निर्णायक मोड़ लिया।

इन नित्य-प्रति के लड़ाई-झगड़ों के कारण सारे पंजाब में अशांति ही फैली रही। गखड़ों, गुज़रों तथा जाटों के लड़ाकू कबीलों ने इस अवसर से लाभ उठा कर गांवों में लूट मार का काम तेज़ कर दिया।

बाबर 26 दिसम्बर 1530 को आगरा में मर गया। उसकी जगह उसका पुत्र हुमायूं सिंहासन पर बैठा। हुमायूं ने अपने भाइयों--कामरान, हिंदाल तथा मिर्ज़ा असकरी को पंजाब, संभल तथा मेवात के क्षेत्र आपसी रज़ामंदी से बांट दिये।

शेरशाह सूरी- लोदी खानदान के सुल्तान बबलोल लोदी ने अपनी सैनिक मज़बूती के लिए किसी समय सुलेमान की पहाड़ियों के रोह के क्षेत्र के पठान अपने पास रखे हुए थे। इन में ही एक इब्राहीम खां सूरी (सूर खानदान का) भी था। उसका पुत्र हसन खां था जिसको ससराम तथा हाजीपुर मिले हुए थे। हसन खां के आठ पुत्र हुए। बड़े का नाम फरीद था जो सन् 1485 में ससराम में पैदा हुआ था। यही फरीद बाद में शेरशाह सूरी के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

इब्राहीम लोदी के युद्ध में मर जाने के पश्चात् फरीद (शेरशाह सूरी)बिहार के सूबेदार बिहार खां के पास चला गया जिसने इसकी बहादुरी से खुश होकर इस को शेर खां के खिताब से सम्मानित किया था। शेर खां समय के प्रभाव में अपनी शूरवीरता तथा होशियारी के कारण बिहार तथा बंगाल पर काबिज़ हो गया।

हुमायूं ने इसकी बढ़ती हुई शक्ति को रोकने के लिए सन् 1532 में इस पर आक्रमण किया तथा इसको अपने अधीन कर लिया और इसे जौनपुर का किलेदार बनाये रखा। इसी प्रकार हुमायूं ने गुजरात के बहादुरशाह की बढ़ती हुई शक्ति को भी दबाया तथा 1535 में चंपानेर भी जीत लिया। इस दौरान शेर खां की शक्ति फिर बढ़ गयी। हुमायूं ने इसकी शक्ति को दबाने का फिर यत्न किया पर सफल न हो सका। हुमायूं के जरनैल खानखानां को मुंघेर के पास पराजित कर शेर खां ने अपने नाम के साथ शाही खिताब लगा लिया। हुमायूं ने उस पर आक्रमण कर दिया पर 26 जून, 1539 को वह चौसा के मैदान में शेरशाह से पराजित हुआ। शेरशाह जौनपुर से धुरंधर मार काट करता हुआ चढ़ आया। हुमायूं ने घोड़ा नदी में फैंक कर मुश्किल से नदी को पार किया और अपनी जान बचाई।

आगरा आकर हुमायूं ने फिर अपनी सैनिक शक्ति एकत्रित की। नौ-दस महीनों की तैयारी के पश्चात् हुमायूं ने फिर कनौज के समीप शेरशाह पर आक्रमण कर दिया जहां 17 मई सन् 1540 को वह शेरशाह सूरी से पराजित हुआ।

हुमायूं आगरा के रास्ते से बड़ी मुश्किल से परिवार तथा खज़ाना ले कर पंजाब की ओर भागा। लाहौर पहुंच कर भाई कामरान से मदद न मिल सकी। कामरान ने शेरशाह के साथ समझौता करके पंजाब शेरशाह को दे दिया और स्वयं काबुल जा पहुंचा। हुमायूं स्वयं सिंघ की ओर दौड़ गया। शेर शाह कुछ दूरी तक उसका पीछा कर के वापिस चला गया।

हुमायूं काफी समय तक परिवार सहित दर-दर की ठोकरें खाता रहा। सन् 1542 में अमरकोट में उसके घर अकबर का जन्म हुआ। कई कष्ट सहन करते हुए सन् 1543 में हुमायूं ईरान पहुंचा। यहां

कई वर्षों की तैयारी के पश्चात् उसके दिन फिरे तथा सन् 1555 में वहां के बादशाह तहिमासप की सेना की सहायता से हुमायूं ने पुन: हिंदुस्तान पर अधिकार किया।

हुमायूं को भगाने के पश्चात् पंजाब की उत्तर–पश्चिमी सीमा को मज़बूत करने के इरादे से शेरशाह सूरी ने जेहलम से 90 मील की दूरी पर अपने पिता पितामाह के क्षेत्र रोह के नाम पर रोहतास का किला बनवाया। बिहार में भी उसने एक रोहतास नामक के किले का निर्माण किया। बंगाल से रोहतास या अटक तक इसने शाही सड़क बना कर बड़ा नाम कमाया। रास्ते में आवश्यकतानुसार वांछित दूरियों पर कूएं खुदवाये तथा सरायें बनवाईं। पर यह पठान बादशाह बहुत समय तक ज़िंदा न रह सका। सन् 1545 में कालिंजर की लड़ाई के समय यह मर गया। इसकी मृत्यु पर इसके पुत्र जलाल खां ने सलीम शाह के नाम से सिंहासन प्राप्त किया। उसके विरुद्ध बहुत से इलाकों में बग़ावत हुई तथा पंजाब में भी उसके विरुद्ध काफी सिर उठाया गया। पर सन् 1547 तक सभी ओर बग़ावतों पर नियंत्रण पा लिया गया तथा देश में शांति स्थापित हो गयी।

यह थी गुरू अंगद देव जी के जीवन काल की राजनीतिक दशा। इन घटनाओं के दौरान ही शेरशाह सूरी से पराजित हो कर हुमायूं लाहौर की ओर आते समय सन् 1540 में गुरू अंगद देव जी को खडूर साहिब में आ कर मिला था।

(5) गुरू अंगद देव जी का गुरगद्दी का समय

गुरू अंगद देव जी ने सन् 1539 से 1552 तक गुरू नानक साहिब की गद्दी की ज़िम्मेवारी निभाई। इस समय के दौरान हुई घटनाओं का विवरण सिख इतिहास से मिलता है, जिस से हमें गुरू अंगद देव जी के महान् व्यक्तित्व तथा महान् गुणों की जानकारी हो जाती है। आपने सिख धर्म के प्रचार तथा प्रसार में क्या योगदान किया, इसकी भी जानकारी भली–प्रकार प्राप्त हो जाती है। सिख धर्म के विकास में आप द्वारा किये गये प्रयास निश्चित तौर पर बहुत महान् तथा महत्वपूर्ण थे।

गुरू नानक देव जी के आदेश के अनुसार आप खडूर तो आ गये पर यहां आ कर आप ने दीवान लगा कर प्रचार करने की जगह पर अपने आप को छिपा लिया। कुछ माह तक आप गुप्त ही रहे। वास्तव में आप ने सिखी की अति कठिन कमाई गुरगद्दी प्राप्त करने के लिए तो नहीं की थी। गुरगद्दी जहां एक भारी ज़िम्मेवारी थी वहां एक बहुत बड़ी महानता भी थी। वे तो नित्य गुरू और परमेश्वर के प्रेम रस में रंगे रहना चाहते थे। आप अपने घर में टिकने की जगह खडूर में बीबी विराइ जी के घर में ही गुप्त हो कर रह गये। बीबी विराई एक उच्च तथा अति पवित्र आत्मा थी। वे गुरू नानक पातशाह से आशीर्वाद प्राप्त गुरसिख थी जो ब्रह्म ज्ञानी वाले पद को प्राप्त कर चुकी थी। गुरू अंगद देव जी वहां एकांत में नित्य ही परमेश्वर के चरणों में जुड़े रहते थे। किसी को भी उनका पता न होने के कारण बाहर से किसी के आने जाने का प्रश्न ही नहीं उठता था।

ऐसा करने का एक प्रत्यक्ष लाभ यह हुआ कि सिख संगत के दिल में गुरू नानक देव जी के उत्तराधिकारी के लिए कितना अगाध प्यार था, वह प्रकट हो गया। करतारपुर आने वाली संगत को जब गुरू ज्योति के दीदार न होते तो वे उसकी खोज में खडूर आ जाते। वहां पर भी गुरू के गुप्तवास के कारण संगत गुरू दर्शन के लिए व्याकुल होने लगी। बाद में संगत ने भाई बुड्ढा जी तथा अन्य सिखों की अगवाई में खडूर साहिब आ कर गुरु साहिब को बीबी विराई के घर से ढूंढ ही लिया। संगत ने आपको दीवान सजा कर गुरू नानक पातशाह की तरह ही लोगों को आत्मिक रहनुमाई देने की विनती की। विनती करने वाले भाई धीरो, अजिता, सैदा, साधारण तथा बाबा बुड्ढा जी अनन्य सिखों में से थे।

सिख विचारधारा का विकास तथा इसका प्रचार

गुरू अंगद देव जी के कंधों पर अब बहुत बड़ी ज़िम्मेवारी आ गयी थी। अब वे केवल अपनी ही आत्म संतुष्टि के ध्येय को ध्यान में रख कर नहीं चल सकते थे, जैसे कि वे पहले हर समय ईश्वरीय प्रेम के ऊंचाइयों में विचरण करते हुए सदा ही प्रभु के नाम सिमरन में विलीन रहते थे।

गुरू नानक देव जी ने अपने जीवन में अनन्त लोगों की जीवनधारा को बदल कर धर्म का सच्चा रास्ता दिखलाया था। ऐसे जिज्ञासुओं को भी समय-समय पर सहायता तथा नेतृत्व की आवश्यकता थी। जो लोग अभी तक परमेश्वर के झंडे के नीचे नहीं थे आ सके, उन पर भी परोपकारी दृष्टि करने की बहुत आवश्यकता थी। माया तथा विषय–विकारों की अग्नि में धधकता हुआ संपूर्ण जनमानस उनको सामने दिखाई दे रहा था। अनंत कृत्रिम मत-मतांतरों ने लोगों के आत्मिक जीवन के निर्माण में अपने निरर्थक तथा आधारहीन सिद्धांतों के प्रचार द्वारा बहुत विध्न डाल रखा था। धार्मिक नेताओं ने, जो एक प्रकार से धर्म के ठेकेदार बने बैठे थे, धर्म को एक व्यापार ही बना रखा था, जिससे उनका हलवा पूरी चलता जा रहा था।

गुरू नानक देव जी ने धर्म तथा मानव जीवन के लगभग हर मसले संबंधी भ्रम दूर करके बड़ा पायेदार तथा तथ्यपूर्ण मार्गदर्शन सिख मत के रूप में दिया। आरंभिक वर्षों में सिख मत को अपनी विचारधारा को निखारने और व्यावहारिक तौर पर मानवीय भाईचारे में ज़ोर शोर से प्रसारित करने की बहुत आवश्यकता थी। गुरू नानक देव जी की ओर से दर्शाये गये अनेकों सिद्धांतों की अनेक पक्षों से व्यावहारिक व्याख्या की अत्यंत आवश्यकता थी। इस को हम सिख विचारधारा का विकास कह सकते हैं।

गुरू अंगद देव जी के सामने करने वाला काम तो बहुत बड़ा, महान्, भारी और कड़ा था पर वातावरण प्रतिकूल सा था। देश की राजनीतिक दशा अच्छी नहीं थी। सभी ओर असुरक्षा की भावना फैली हुई थी। वर्णश्रमके मत के ब्राहमण नेता सिख मत के उदय व प्रचार से खुश नहीं थे। समाज में ऊंची–नीची जातियों के भेद भावों के कारण समाज में उन की सरदारी कायम थी। जाति अभिमानियों ने लाखों करोड़ों व्यक्तियों को, जो वास्तव में श्रमिक-मज़दूर ही थे, शूद्रों का नाम दे कर, उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया था। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इस वर्ग की भारी आवश्यकता होने के बावजूद इसको दुत्कारा जाता था। इनके छू जाने से ही नहीं परछाईं से भी जाति अभिमानियों को छूत लग जाती थी। गुरू नानक के संपूर्ण मानवता के सहअस्तित्व वाले सिद्धांत, जाति अभिमानियों को रास नहीं आ सकते थे। उन का सिख मत का विरोधी बन जाना स्वाभाविक ही था।

चनाब नदी से पार के लगभग सारे ही क्षेत्र को मुसलमान, इस्लाम की परिधि में ले आये थे। उन के पास राज्य बल भी था और जाति-पात के वर्ण भेद से कमज़ोर हुए हिन्दू समाज के बहुत बड़े भाग की अपेक्षा अपने अच्छे तथा बेहतर सिद्धांतों के द्वारा आकर्षित करने की शक्ति भी थी। इस धर्म के नेता, मुल्लां मुलाने भी सिख मत की बुलंदी को देखकर दिल से खुश नहीं हो सकते थे। पंजाब में शायद ही कोई नगर हो, जहां गुरू नानक मत को मानने वाले श्रद्धालु पैदा न हो गये हों। रावी नदी के सारे उत्तरी क्षेत्र को तो एक प्रकार से गुरू नानक देव जी ने पूरे सिख मत के प्रभाव में कर लिया था। गुरू अंगद देव जी ने अब खडूर साहिब के सिखी प्रचार के केन्द्र के द्वारा ब्यास नदी तथा रावी के बीच के माझा के क्षेत्र को गुरू नानक के झंडे के नीचे ला कर ईश्वर के साथ जोड़ना था। यह बात मुसलमानों के धार्मिक नेताओं को गावारा न थी।

गुरू नानक देव जी के ज्योति में विलीन होने तक इस मत पर श्रद्धा, विश्वास और यकीन रखने वाले लोग तो बहुत थे परंतु उन श्रद्धालुओं की संख्या भी कोई कम नहीं थी जो अभी तक ऐसा महसूस

करने लग जाते थे कि संसार के संपूर्ण त्याग के बिना मनुष्य अपने मन में ईश्वरीय प्यार उत्पन्न नहीं कर सकता और न ही पूर्ण त्याग के बिना मनुष्य अपनी कामनाओं या इच्छाओं को परमेश्वर के अधीन करने में समर्थ हो सकता है। सिख मत मौलिक तौर पर गृहस्थियों का धर्म है और गृहस्थी रह कर अपनाये जा सकने वाले धर्म को ही इसमें सर्वश्रेष्ट माना गया है। परन्तु बाबा श्री चंद जी के नेतृत्व में केवल त्याग की ओर झुकाव रखने वाले तथा उसको ठीक राह सोचने वाले सेवकों की भी संख्या काफी हो चुकी थी। बाबा श्री चंद के चलाए उदासी मत के अधिकतर विश्वास तथा सिद्धांत तो गुरू नानक देव जी वाले ही थे पर वे सिखी के गृहस्थ जीवन के मौलिक सिद्धांत से ही मुंह फेरे बैठे थे। एक प्रकार उनका स्वाभाविक झुकाव समय पा कर ब्राह्मणी मत का भांजन बनने वाला था अर्थात् शीघ्र ही ब्राह्मण मत में विलीन होने वाला था।

एक और बात भी इस समय सिख मत के प्रचार प्रसार में अड़चन खड़ी कर सकती थी। वह यह कि बाबा श्री चंद जी का जीवन या व्यक्तित्व आपत्तिजनक नहीं था। आप एक बहुत ही पवित्र तथा उच्च जीवन के धारणकर्त्ता थे और गुरू नानक बाणी की बड़ी प्रभावशाली ढंग से व्याख्या भी करते थे वैसे, इस में भी कोई शक नहीं कि वे उपरोक्त विषय पर गुरू नानक देव जी के साथ मौलिक मतभेद रखते थे, तथा गुरू नानक देव जी के वचनों को संपूर्ण तौर पर मानने को तैयार नहीं थे। श्री गुरू अंगद देव जी ने अपने गुरमत ज्ञान, अति पवित्र जीवन और परले दर्जे की नम्रता आदि के अस्त्रों द्वारा गुरसिखीमें ही विचारधारा की भिन्नता आ जाने की बीमारी को बहुत सफलता से रोका तथा गुरू नानक देव जी की विचारधारा की सर्वश्रेष्ठता कासिद्ध कर दिया।

6. गुरबाणी तथा गुर-इतिहास की संभाल

गुरमुखी लिपि का प्रचार :– बहुत समय तक यही प्रचार किया जाता रहा है कि गुरमुखी लिपी गुरू अंगद देव जी ने ईज़ाद की थी। किसी सीमा तक इसका कारण यह भी है कि तथाकथित बाबा मोहन वाली सैंचियों के पृष्ठ 215 तथा 223 पर किसी प्रेमी ने यह लिख दिया था कि गुरमुखी के अक्षर गुरू अंगद देव जी ने बनाये थे। कुछ ने यह विचार भी दिया है कि गुरमुखी लिपि के अक्षरों की रूपरेखा गुरू अंगद देव जी ने गुरू नानक देव जी के जीवन काल में स्वयं बनाई थी और गुरू नानक साहिब को दिखा दिये थे। परंतु यह विचार तर्कपूर्ण नहीं क्योंकि गुरमुखी लिपि के पैंतीस के पैंतीस अक्षर गुरू नानक साहिब की बाणी, राग आसा की पट्टी में मौजूद हैं। कुछ विद्वान पट्टी की बाणी तथा लिपि के नाम को दृष्टि में रख कर यह विचार भी देते रहे हैं कि यह लिपि गुरू नानक देव जी ने ईज़ाद की थी, पर तत्पश्चात् हुई नवीन अन्वेषण ने इस बात को बिल्कुल स्पष्ट कर दिया है कि इस लिपि के अक्षर गुरू नानक देव जी के जन्म से भी बहुत पहले से प्रयोग में आ रहे थे।

वास्तव में बात यह है कि ब्राह्मणी मत के सभी ग्रंथों की बोली संस्कृत थी, जो जनभाषा नहीं थी और पुरोहित श्रेणी ने इसके बल पर ही समाज पर अपना प्रभुत्व बनाये रखा था। वैसे, पंजाब के लोगों में उस समय लंडे लिपि (टाकरे) बहुत प्रचलित थे। पंजाब में बोली जाने वाली भाषा को लिखने के लिए आदर्श लिपी गुरमुखी ही है। नवीन खोजों से पता चलता है कि ये अक्षर विद्यमान ध्वनियों के साथ गुरू नानक साहिब से पहले ही मौजूद थे पर एक स्वतंत्र लिपि के रूप में इसको मान्यता सब से पहले गुरू नानक साहिब से ही प्राप्ति हुई। सतगुरू साहिबान ने बाणी तो आम लोगों के कल्याण के लिए लिखनी थी और इसलिए वह लोगों की भाषा में लिखी गयी। यही कारण था कि बाणी के लिए सतगुरू साहिबान तथा गुरू साहिब की ओर से मान्य दूसरे भक्तों ने संस्कृत भाषा की जगह पर जन-भाषाओं का प्रयोग किया। संस्कृत तो केवल पंडितों-पुरोहितों ने अपनी सरदारी कायम रखने के लिए अपना रखी थी।

मुद्दा यह कि बाणी के लिए सब से बढ़िया समझी गयी लिपि को गुरमुखी नाम मिल गया। गुरू अंगद देव जी ने तो इस लिपि को बहुत अधिक ज़ोर तथा उत्साह से प्रचलित कर दिया। "लायटनर" के अनुसार तो गुरू अंगद देव जी ने गुरमुखी लिपि को अधिक प्रचलित करने के लिए बच्चों के लिए बालबोध (कायदे) भी बड़े उत्साह से लिखवाये और गुरमुखी लिपी के प्रचार हेतु महत्त्वपूर्ण काम किया। इस लिपि को लोकप्रिया बनाने के लिए इसके अक्षरों के साथ आरंभ होने वाले महान् आत्मिक उपदेश (विशेष तौर पर पट्टी वाली बाणी की पवित्र पंक्तियां) सुन्दर लिखाई वाले 'माटो' के रूप में भी प्रचलित किये। इस समय गुरू नानक देव जी तथा भक्तों की बाणी के शब्दों के, इसी गुरमुखी लिपि में गुटके बनवाये गये।

गुरू अंगद देव जी ने बाणी की अनेकों पोथियां लिखवाई थीं और सिख धर्म के प्रचार के प्रत्येक केन्द्र को बाणी की एक-एक हस्तलिखित पोथी भेजी थी।

इस लिपि के ऐसे बड़े पैमाने पर पचार ने ही इस लिपि को गुरमुखी अर्थात् "गुरू की अनुसरणकर्त्ता" नाम धारण कर लेने का बल दिया। अपने धर्म प्रचार के लिए इस लिपि को और जनभाषा पंजाबी को अपना लिया। **यह लिपि सिख मत के, हिन्दुओं या वर्ण-आश्रम के मत के मानने वालों से बिल्कुल अलग विलक्षण तथा स्वतंत्र अस्तित्व को उजागर करने लग गयी। यह लिपि समय पा कर सिखों को एक अलग कौम के रूप में ढालने के लिए बहुत सहायक सिद्ध हुई।**

बाणी संभालना तथा और बाणी लिखना : ऐतिहासिक संदर्भों के द्वारा पता चलता है कि गुरू नानक देव जी एक पोथी (पुस्तक) अपने पास रखते थे जिस में वे अपने प्रत्येक शब्द को दर्ज कर लेते थे और अपनी बाणी के अलावा उन्होंने उस पोथी में सत्य की कसौटी पर पूरे उतरने वाले भक्तों की बाणी भी दर्ज कर ली थी। भाई गुरदास जी ने अपनी रचना में "आसा हथ किताब कछ" और "पुछण खोल किताब नूं, वडा हिंदू कि मुसलमानोई" लिखकर इस पोथी के अस्तित्व की सूचना दी है। "महिमा प्रकाश" ने गुरू अंगद देव जी को गुरगद्दी मिलने के समय गुरू नानक देव जी द्वारा यह पोथी देने का भी जिक्र किया है।

इस पोथी में गुरू अंगद देव जी ने अपनी लिखी हुई बाणी भी दर्ज करवा दी थी। मात्रा के हिसाब से गुरू अंगद देव जी ने बहुत थोड़ी बाणी की रचना की है लेकिन इस बाणी का विषय-वस्तु गुरू नानक देव जी की बाणी के तुल्य ही प्रभावशाली है। बड़े-बड़े आत्मिक सिद्धांत बहुत कम तथा सादा शब्दों में सतगुरू साहिब ने बयान कर दिये हैं। गुरू अंगद देव जी ने कुल मिला कर 63 श्लोक लिखे हैं। प्रत्येक श्लोक अपने आप में एक संपूर्ण तथा स्वतंत्र आत्मिक विचार समोए हुए है। गुरू ग्रंथ साहिब को मौजूदा स्वरूप देते समय गुरू अर्जुन देव जी ने और दूसरे सतगुरू साहिबान द्वारा उच्चारी हुई 'वारों' की सही बैठने वाली पउड़ियों के साथ नीचे लिखे के अनुसार गुरू अंगद देव जी के श्लोक दर्ज कर दिये थे। क्योंकि आप के 63 के 63 श्लोक, 9 वारां में उचित स्थानों पर दर्ज हो गये, इसी कारण "वारा ते वधीक" वाले शीर्षक में गुरू अंगद देव जी का कोई श्लोक नहीं है। श्लोक का यह बंटवारा निम्नानुसार है

1. गुरू नानक देव जी की 'वारों' में ३२ श्लोक निम्नानुसार हैं।

माझ की वार में -	१२ श्लोक
आसा की वार में -	१५ श्लोक
मलार की वार में -	५ श्लोक

2. गुरू अमरदास जी की "वारां" में निम्नानुसार १६ श्लोक है।

सूही की वार में -	११ श्लोक
रामकली की वार में -	७ श्लोक
मारू की वार में -	१ श्लोक

3. गुरू रामदास जी की "वारां" में निम्नानुसार कुल १२ श्लोक हैं।

सिरी राग की वार में -	२ श्लोक
सोरठि की वार में -	१ श्लोक
सारंग की वार में -	६ श्लोक

गुरू अंगद देव जी के सारे श्लोक, भावार्थ सहित अलग-अलग शीर्षकों से अपनी विषय सामग्री की तरतीब के अनुसार अंत में दिये गये हैं, जिनका समूचा अध्ययन आप जी की विचारधारा तथा व्यक्तित्व को बहुत सुंदर ढंग से प्रस्तुत करता है।

गुरू नानक देव जी की जीवन गाथा लिखवाना : इस में तो कोई सन्देह नहीं कि गुरबाणी सिखी की आत्मा है। गुरू नानक तथा अन्य सतगुरू साहिबान का असल स्वरूप तो उनकी बाणी ही है। सिख मत के अस्तित्व से यदि किसी का सीधा संबंध है तो वह गुरबाणी ही है, पर इतिहास का भी अपने महत्त्व से सिर फेरना कोई बहुत अकल का कार्य नहीं है। यदि गुरबाणी सिखी की आत्मा है तो इतिहा को सिखी का शरीर माना जा सकता है। आत्मा के बिना शरीर का कोई अस्तित्व ही नहीं और उसक मिट्टी बन जाना स्वाभाविक है। इसी प्रकार शरीर के अस्तित्व के बिना आत्मा को समझ सकना त उसके अस्तित्व पर विश्वास जमना आसान नहीं है। कुछ कौमों के पास बाणी का पहलू किसी सीमा र पूरा करने के लिए तो चीज़ है, पर वह केवल किताबी श्रृंगार ही बन सका है। उनके सिद्धांतों के अनु ार जीवन यापन करने तथा उन सिद्धांतों पर मर मिटने वाले लोगों को, उनका इतिहास पेश न कर सका। वे सिद्धांत समय के थपेड़े न सहार सके और कालग्रास हो गये। इसी प्राकर सिद्धांतों तथा नियमों की जड़ के बिना, सामयिक मांग की पूर्ति के लिए कुछ कौमें थोड़ा–सा इतिहास तो पेश कर गयीं, पर जड़ के बिना यह सब कुछ कायम नहीं रखा जा सकता था। अर्थात्, पायेदार सिद्धांतों के अस्तित्व में न होने के कारण उन कौमों का ऐतिहासिक प्रवाह आगे न चल सका और वे कौमें ध्वस्त हो गयीं।

इस पक्ष से गुरू नानक नामलेवा बहुत भाग्यशाली हैं जिनके पास बाणी और इतिहास दोनों ही सर्वोच्च कोटि के मौजूद है। सिद्धांत के पक्ष से दुनियां के सभी निष्पक्ष विद्वान तथा आत्मदर्शी गुरबाणी को बहुत बड़ा तथा मूल्य आत्मिक खज़ाना मानते हैं और समय पा कर सिख इतिहास ने आरों से चिर जाने वाले, रंबियों से खोपड़ियां उतरवाने वाले, चरखड़ियों पर चढ़ कर शहीद होने वाले, देगों में उबल जाने वाले, धर्म के लिए ज़िंदा जल जाने वाले तथा सवा-सवा लाख के साथ अकेले लोहा लेने वाले तथा मर मिट जाने वाले, जो अनेकों धर्मात्मा शूरवीरों को पेश किया है, उन का भी और कहीं उदाहरण नहीं मिलता है। बहुत लंबे समय तक सिख मत ने बड़े ज़बरदस्त राजसी तूफान का सामना किया। सिख मत गैर कानूनी घोषित कर दिया गया, सिखों के सिरों के मोल रखे गये, सिखों का पता टिकाना देने वाले लोगों को हकूमत की ओर से इनाम मिलते रहे, पर इतना कुछ होने के बावजूद तथा हकूमत के सिख मत को जड़ से मिटा देने के फैसले के बावजूद सिख खत्म नहीं किये जा सके और समय पा कर एक बहुत बड़ी शक्ति के रूप में उभर कर सामने आये। यह सब कुछ इसलिये ही संभव हो सका क्योंकि इस बाणी के रचनाकार स्वयं दृढ़तापूर्वक से इस बाणी में दर्शायें सिद्धांतों पर चलते रहे और इन सिद्धांतों के प्रचार–प्रसार के लिए वे बड़ी लगन से कठोर परिश्रम का जीवन व्यतीत करते थे।

गुरबाणी सिद्धांतों को अच्छी तरह समझने-समझाने के लिए सतगुरू साहिबान के अपने जीवन कारनामों से बहुत सुंदर तथा निर्मल नेतृत्व मिलता है। इस विचार को ध्यान में रख कर गुरू अंगद देव जी ने गुरू नानक देव जी के जीवन कारनामे कलमबंद करवाने का प्रयत्न किया। गुरू नानक देव ज़ी के जीवन समाचार गुरू घर के अनेकों प्रेमी समय-समय पर गुरू अंगद देव जी के दर्शन करने के लिए गुरू दरबार की हाज़री भरते समय दर्ज करवाते रहे, जिनकी किसी समय गुरू नानक देव जी के संग मुलाकात

या वार्ता हुई होती थी। गुरू नानक देव जी के बचपन के समाचार तलवंडी से लालू जी से मंगवाये गये थे। पहली साखी जन्म से संबधित होने के कारण सारी रचना का नाम ही "जन्म साखी" हो गया। याद रहे कि गुरसिख समय-समय पर अपनी जानकारी से संबंधित गुरू नानक देव जी की साखियां दर्ज करवाते रहे थे और इस कारण ये सन्-संवतों के क्रम से अंकित नहीं हुई हैं। लेखन शैली में एतिहासिकता निभाने का यत्न करने की जगह पर गुरू के लिए श्रद्धा के फूल भेंट करना ही श्रद्धालु सिखों का आशय रहा है।

दुःख की बात है कि असली तथा पहली "जन्म साखी" कहीं नहीं मिलती। उसकी सही नकलें भी नहीं मिल सकी हैं। जन्म साखी में अलग-अलग व्यक्ति जोड़ तोड़ करते रहे हैं। मिहरबान तथा हिंदालियों ने तो गुरू बाबे का जीवन बहुत ही बिगाड़ कर पेश करने का प्रयास किया। आज जन्म-साखी अनेकों रूप में मौजूद है। 25-30 साखियों से 575 साखियों वाली जन्म-साखियां चल रही हैं। गुरू बाबा के जीवन की वास्ताविकता को खोजना भी कठिन हुआ पड़ा है।

"जन्मसाखी" को संशोधित करके लिखने के इरादे से ही शहीद भाई मनी सिंह जी ने "ज्ञान रत्नावली" नामकी पुस्तक कलमबंद की थी।

कुछ भी हो, आज चाहे वह रचना अपने असल रूप में न मिल सके और साखियों में हुई जोड़-तोड़ के कारण गुरमत प्रचार की राह में हुई हानि को भी नज़र अंदाज नहीं किया जा सकता, पर उस में जन्म-साखी का कोई दोष नहीं। बाद के लेखकों का तथा तथ्यों को मिश्रित करके गुरू पातशाह के जीवन को महत्त्वहीन बना कर पेश करने वाले गुरनिंदकों का दोष है जिनके साथ पंथ समय पर निपट नहीं सका। वैसे गुरू अंगद देव जी का आशय तो बड़ा स्पष्ट है कि वे चाहते थे कि गुरसिख गुरबाणी के आत्मिक उपदेशों को समझने के लिए गुरू नानक देव जी तथा उनके सिखों के जीवन से प्रेरणा लें न कि हिन्दु अवतारों की पौराणिक मन घड़त कहानियों से चिपके रहें। जैसे देववाणी कहलवाने वाली संस्कृत की जगह पर जनभाषा तथा वेदों शास्त्रों की जगह पर गुरबाणी को अपनाया गया था, बिल्कुल इसी प्रकार पौराणिक मन घड़त किसमों की जगह पर गुर इतिहास से प्रेरणा लेने की जगह पर दीर्घ-दर्शी योजना ही इसके सृजन में, मूल रूप में काम कर रही थी।

(7) जोगी शिवनाथ तथा गुरू अंगद देव जी

गुरू अंगद देव जी के समय की जीवन साखियों में खडूर साहिब के एक जोगी का वर्णन आता है। जिसको साखियों में खडूर साहिब का तपा कहा गया है। नाम इसका था शिवनाथ, और था यह जंग मत का मानने वाला। उस समय पंजाब तथा उत्तरी हिन्दुस्तान में नाथ पंथियों, जोगियों तथा जंत्र-मंत्रों वाले साकेतों का बहुत ज़ोर था। इन्होंने अनेकों जगह पर अपने म बनाये हुए थे। एक ओर तो इन्होंने घर-घाट त्याग कर साधु मलंग बनने वाला रास्ता अपनाया हुआ था, दूसरी ओर रिद्वियों-सिद्वियों के माया जाल द्वारा आम जनता को प्रभावित करके अपना मुरीद (शिष्य) बनाने का यत्न किया करते थे। इन्होंने जगत मिथ्या है, वाला सिद्धांत ऐसे घटिया तरीके से प्रचारित किया कि समाज का सामान्य आदमी भगौड़ा रूचियों का धारणकर्त्ता हो गया। कर्त्तव्यों को पूरा करने की भावना ही समाप्त हो गयी। देश पर किसी का राज्य हो, जनता पर कोई अत्याचार करता रहे, अत्याचार या धक्का होता हो, इन जोगियों की पर कोई अच्छा या बुरा प्रभाव नहीं होता था। समाज, भ्रातृत्व अथवा मानवता के प्रति कर्त्तव्यों के बारे में सोचना, ये अपने दिमाग़ पर बेकार का बोझ डालना समझते थे, क्योंकि सारा संसार इन के विचार में मिथ्या या कपट था जिस में सिवाय संसार त्याग के इनके लिए करने को कोई काम ही नहीं था।

संसार तथा घर-घाट त्यागने की कुरुचि ने एक ओर तो इस देश को अत्यन्त कमज़ोर बना दिया था तथा दूसरी ओर इन नाममात्र के त्यागियों के मनों में अहं, ईर्ष्या, नफरत तथा अपनी पूजा और सम्मान

करवाने की काफी लालसा पैदा कर दी थी जिस के कारण ये लोग मानसिक शांति से भी हाथ धो बैठे थे।

गुरू नानक पातशाह का मत इस मामले में बड़ा साफ़ और स्पष्ट है। इस मत में संसार तथा परिवार को त्याग कर साधु बनने को जीवन संघर्ष से भगौड़ा हो जाने के तुल्य माना गया है। खेतिहर तथा श्रमिक समाज पर बेकार जोगी लबादे का भार डालना धर्म नहीं, अनर्थ है। गुरू नानक देव जी ने नाम जपने, बांट कर खाने तथा परिश्रम करने के सुनहरी सिद्धांत दिये जिस के अनुसार ईश्वर के साथ प्यार सहित जुड़ना तो लाज़मी करार कर दिया, पर साथ ही हरेक व्यक्ति को कारोबार करने तथा फिर सारे मानवीय भाईचारे को अपना भाई समझ कर बांट कर खाने की हिदायत की। संसार तथा परिवार को त्यागने की जगह पर संसार और परिवार के मोह को त्यागने की महान् शिक्षा दी।

सांसारिक तथा पारिवारिक जीवन व्यतीत करते हुए इन के मोह से किस प्रकार निर्लिप्त रहना है, यह वास्तविकता समझाने के लिए कमल फूल तथा मुर्गाबी की मिसालें पेश कीं। कमल का फूल पानी में रह कर ही खिलता है, विकास करता है और यौवन को प्राप्त करता है पानी से भीगता नहीं। मुर्गाबी पानी में तैरती है, पर स्वयं पानी से ज़रा भी नहीं भीगती। इसी प्रकार आदर्शक जीवन वाला जिज्ञासु संसार तथा परिवार में रह कर भी उसके मोह से निर्लिप्त रहता हुआ परमेश्वर के संग लिव जोड़ रखता है। यथा :

"जैसे जल महि कमल निरालम, मुरगाई नैसाणे ॥
सुरति सबदि भव सागर तरीऐ नानक नाम वखाणै ॥"

[रामकली महला १]

आदर्शक गृहस्थी जीवन को रूपमान करते हुए गुरमत के गृहस्थ मार्ग को केवल एक जीवन-युक्ति ही नहीं माना, बल्कि धर्म भरपूर गृहस्थी जीवन को एकाएक सफल तथा आदर्शक जीवन–युक्ति के तौर पर सम्मानित किया है। गृहस्थी रहते हुए मनुष्य ने विकारों से बचना है और गुणों को धारण करने वाले रास्ते पर चलना है। यथा :

"सो गिरही जो निग्रह करै ॥ जपु तपु संजम भीखिआ करै ॥
पुंन दान का करे सरीर ॥ सो गिरही गंगा का नीर ॥"

[रामकली महला १]

गुरमत के महान् विद्वान भाई गुरदास जी ने तो अनेक मिसालें दे कर गुरमत के दर्शाये धर्म भरपूर गृहस्थी मार्ग को सब से उत्तम और प्रधान धर्म माना है। यथा :

"जैसे सर सरिता सकल मैं समुंद्र बडो,
मेर मै सुमेर बडो, जगत बखानि है ॥
तरवर बिखै जैसे चंदन बिरख बडो,
धातन मै कनक अति उतम कै मान है।
पंछन मै हंस म्रिग राजन मै शारदूल,
रागन मै सिरी राग, पारस पखान है ॥
गिआनन मै गिआन अर धिआनन मै धिआन गुर,

सकल धर्म मै ग्रिहसत प्रधान है।

गुरू नानक देव जी ने जब अपने सत्य धर्म का ज़ोरदार प्रचार करके जोगियों के प्रभाव को कई जगह पर समाप्त किया और कई जगह पर जोगियों का गलत प्रभाव बहुत कम किया तब यह बात तो स्वाभाविक ही थी कि वे गुरमत अथवा गुरू नानक पातशाह का सामना मज़बूत हो कर करने का यत्न करते। सुमेर पर्वत, गोरखमत्ता, कदली वन आदि अनेक स्थानों पर जोगियों के झुंडों के झुंड ज्ञान-भेड़ अथवा सैद्धांतिक गोष्ठी करने हेतु प्रकट हुए। हर जगह पर अपने थोथे और खोखले सिद्धांतों के कारण गुरू नानक पातशाह के हाथों काफ़ी ज़लील हुए। अनेकों जोगी तो अपनी मनमत त्याग कर गुरू नानक मत के धारणी बने पर कुछेक अड़ीयल, हठ करके जोग मत का बीज नाश होने से बचाने का यत्न करते रहे। अचल बटाले में शिवरात्रि के मेले के अवसर पर जोगियों ने गुरू नानक पातशाह के साथ अंतिम असफल गोष्ठी की जिस में जनता के भरे समूह में गुरू नानक पातशाह ने उनके पंथ के खोखले मत का बखिया उधेड़ कर रख दिया।

गुरू नानक साहिब ने तो वास्तव में कभी भी गृहस्थ का त्याग नहीं किया था। हां, परोपकार की खातिर आग में धधकते जनमानस में सत्य धर्म की शीतलता पहुंचाने के लिए लंबे-लंबे प्रचारक दौरे ज़रूर लगाये थे जिनको उदासियों की संज्ञा दी गयी। अचल बटाले के मेले के समय गुरू नानक साहिब को आम गृहस्थियों के वेश में देख कर जोगियों ने अपनी अल्प बुद्धि के आधार पर टिप्पणी की, जिस में घर बार छोड़ कर त्यागी साधु बनने को दूध तथा गृहस्थ मार्ग को कांजी बता कर महत्त्वहीन करना चाहा। पर गुरू साहिब ने आम जनता के सामने जोगियों को यह कह कर ज़लील किया कि हे मूर्ख जोगियो। यदि तुम स्वयं को गृहस्थियों से इतना ही अधिक ऊंचा तथा पवित्र मानते हो, तो फिर क्या कारण है कि उन अपवित्र तथा नीच गृहस्थियों के घरों में से ही अपनी उदर पूर्ति हेतु भिक्षा मांगने जाते हो। इस गोष्ठी को भाई गुरदास जी ने बहुत सुंदर ढंग से वर्णित किया है। यथा :

"खाधी खुणस जुगीसरां, गोसट करन सभे उठि आई॥
पुछे जोगी भंगरनाथ, तुहि दुध विचि किउ कांजी पाई॥
फिटिआ चाटा दुध दा, रिड़किआं मखण हथि न आई॥
भेखु उतारि उदास दा, वति किउ संसारी रीति चलाई॥
नानक आखे भंगरनाथ, तेरी माउ कुचजी आही॥
भांडा धोइ न जातिउनि, भाइ कुचजे फुल सड़ाई॥
होइ अतीत ग्रिहसत तजि, फिर उनहू के घर मंगणि जाई॥
बिनु दिते कछु हथ न आई॥"

अचल बटाले में सत्य पृछो. से जोगियों की कमर ही टूट गयी। आम जनता में उनका थोथापन उभर कर सामने आ गया और गुरू नानक मत का अच्छा बोल-बाला हुआ, पर बीज-मात्र कई जगह पर बचे-खुचे जोगी अपनी साख पुन: बनाने के लिए हाथ पैर मार रहे थे। खडूर साहिब में भी जोगियों का एक मज़बूत मठ था। यहां पर इस मठ का इंचार्ज एक कनपट्टा जोगी शिवनाथ था। जब खडूर साहिब में गुरू अंगद देव जी ने सिखी का एक मजबूत केन्द्र बना कर गुरमत मारतंड की किरणें बिखेरीं, तब यह जोगी अपने मत के थोथेपन को महसूस करके कहीं बाहर निकल गया। इसने इस आशा से चुप्पी साध ली थी कि आने वाले समय में कभी तो भले दिन आयेंगे। जोगी का डेरा खाली सा हो गया। कई

वर्ष और मास जोगी वापिस नहीं आया। कईयों ने समझा कि जोगी कालग्रास हो गया होगा पर कनपट्टे शिवनाथ का शरीर देवताओं की इस पवित्र भारत भूमि में अभी साक्षात कायम था।

एक दिन भटकते–भटकते यह जोगी फिर खडूर साहिब आ पहुंचा। उसके चेटकी तथा क्रोधी स्वभाव को हर कोई जानता था। गुरू साहिब के खडूर साहिब आने से पूर्व उसका नगर में बहुत प्रभाव तथा दबदबा बना हुआ था। पर गुरू साहिब के आने के कारण खडूर साहिब के लोग गुरू अंगद साहिब जी की महान्, मीठी तथा प्यारे व्यक्तित्व व उन की शिक्षाओं से बहुत प्रभावित हो चुके थे। खडूर साहिब के लोगों ने कनपट्टे जोगी शिवनाथ को पूरी तरह नज़र–अंदाज़ कर दिया और किसी ने उसकी खबर न ली। जोगी ने क्रोध किया और गुरू अंगद देव जी के साथ ईर्ष्या करने लगा। वह किसी ऐसे अवसर की तलाश में था जब वह गुरमत प्रचार की राह में रूकावट खड़ी कर सके। करनी करतार की कि उस वर्ष वर्षा बिल्कुल ही नहीं हुई। किसानों की खेती वर्षा पर ही निर्भर थी। भाद्रो भी सूखा निकलता दिखाई दे रहा था। वर्षा न होने के कारण किसान दुखी थे। हरी खेतियां भी सूखने लगी थीं। वर्षा तो ईश्वर का खेल है कभी पहले और कभी बाद में बरस जाती है, कभी कम होती है और कभी अधिक।

कनपट्टे जोगी ने अवसर से लाभ उठाने के लिए हाथ पैर मारने शुरू कर दिये। लोगों को कहने लगा, "वर्षा कैसे हो ? तुम्हारे पापों का फल तो अंतत: मिलना ही है न ! शास्त्रों की मर्यादा को तोड़ कर तुमनेब्रह्मचारी साधुओं को छोड़ कर, गुरू अंगद देव जी को गुरू बना लिया है जो एक गृहस्थी, घर बाल बच्चे दार वाले हैं। गुरू तो केवल हम बन सकते हैं। हमें छोड़कर गुरू अंगद देव जी को मानने से यह उपद्रव तो प्रकट होना ही था।" कुछ बुद्धिमान लोगों ने गुरू जी के महान् गुणों का वर्णन भी कर दिया और कहा कि वह तो सब को शुभ व्यवहार का उपदेश ही देते हैं, सब का भला ही करते हैं। वह प्रभु–प्रेम का साक्षात स्वरूप हैं। इस बात ने जोगी पर बल्कि जलती पर तेल का काम किया। कहने लगा यदि गुरू जी इतने महान् हैं तो फिर उनको कहो, वर्षा करवा दें। "विनाश काले विपरीत बुद्धि" यहां तक ईर्ष्यालु कनपटा जोगी आगे बढ़ गया कि कहने लगा, "तुम गुरू अंगद देव जी को खडूर साहिब से बाहर निकाल दो, मैं अपने आप वर्षा बरसा लूंगा।"

गुरू जी तो सदा ईश्वर की रज़ा में राज़ी रह कर परिश्रम करने की प्रेरणा किया करते थे, पर गांव के कुछ दु:खी किसान कनपटे शिवनाथ की बातों में आ गये। कुछ किसान बातों में आ कर गुरू जी के पास आये और कहने लगे कि या तो वर्षा करवा दो या नगर छोड़ दो क्योंकि कनपटे जोगी के कथनानुसार वर्षा आप के कारण ही रुकी हुई है। ज़िमींदार बहुत तंग आये हुए हैं। इस तंगी के कारण ही वे गुरू साहिब से ईमान त्याग बैठे थे।

गुरू साहिब ने तो सदा सब को प्रभु की रज़ा में राज़ी रहने की शिक्षा दी थी। यही सिद्धांत तो धर्म तथा भक्ति का मूल तत्व है। लोगों के भ्रम को जड़ से काटने के लिए आप ने "खडूर" छोड़ दिया और भैरोवाल आदि से होते हुए खान रज़ादे की जूही में जा डेरा लगाया। "तुड़" आदि गांवों में भी प्रचार किया। टिकाना करने वाली जगह पर गांव खान छपारी बस गया।

इन दिनों में गुरू अमरदास जी गुरू अंगद देव जी के आदेशानुसार किसी काम के लिए अपने गांव बासरके गये हुए थे। खडूर साहिब वापिस आ कर सारे हालत देखे तो आप दंग रह गये और बहुत दु:खी हुए। गुरू अंगद देव जी जैसी धर्म, परोपकार तथा ईश्वरीय प्यार की साक्षात मूर्ति के साथ ईर्ष्या के कारण निरादर करने वाले कनपटे जोगी शिवनाथ के साथ सही ढंग से निपटने का आप ने निर्णय कर लिया। सच्चा गुरसिख अपने गुरू पातशाह का निरादर कैसे सहन कर सकता है ? (गुरू) अमरदास जी यह बात भी भली भांति समझते थे कि जोगी शिवनाथ लोगों को सत्य धर्म का उपदेश देने की जगह पर वहमों-भ्रमों में भटकायेगा और इस प्रकार उनका आत्मिक जीवन भी बर्बाद कर देगा।

कनपटे जोगी की बातों में आ कर लगभग सारा नगर ही गलत रास्ते पर पड़ गया था। ऐसी स्थिति में(गुरू) अमरदास जी की जगह पर यदि कोई और होता तो विरोधियों की बहुसंख्या को देखकर अवश्य ही घबरा जाता। आप ने महान् दृढ़ता का सबूत पेश किया। आप नगर के प्रत्येक प्रधान को मिले। अपने मीठे वचनों द्वारा उनकी अंतर आत्मा को झकझोरा और नगर वासियों और प्रधान लोगों को उनकी मूर्खता तथा कनपटे जोगी की कुटिलता तथा ईर्ष्या को उभार कर नंगा कर दिया। आठ दिनों से भी अधिक समय हो चुका था परन्तु वर्षा नहीं हो रही थी। किसानों तथा नगरवासियों द्वारा(गुरू) अमरदास जी ने शिवनाथ को सीधी बात कह दी कि अब वह अपनी करामात द्वारा वर्षा करके बताये, नहीं तो अपने ईर्ष्या भरे मंद कर्मों का फल भुगतने को तैयार हो जाये।

वर्षा बिल्कुल ही न होने के कारण किसान आगे ही काफी तंग आ चुके थे। तिस पर (गुरू) अमरदास जी ने उन्हें उनकी महान् त्रुटि का अहसास करवा दिया था। गुरू अंगद देव जी के मीठे, प्यारे तथा परोपकारी ईश्वरीय व्यक्तित्व के साथ किये गये दुर्व्यवहार के कारण नगरवासी और किसान बार बार पछता रहे थे। वे एक ओर तो गुरू अंगद देव जी से बेमुख हो गये और दूसरी ओर जोगी शिवनाथ की वर्षा करवा देने की गप्प पूरी न होने के कारण काफी दु:खी थे।

कनपटे जोगी शिवनाथ का वर्षा करा सकने का तुक्का तो लग न सका, पर वह लोगों के तानों का सामना न कर सका और बहाने बना कर आनाकानी करने लगा। कभी कहता कि नगरवासियों ने गुरू अंगद देव जी को गुरू मान कर बड़ा पाप किया था। इसलिए उसके-जंतर मंत्र भी वर्षा करवा सकने के समर्थ नहीं हो रहे। लोग अब तक सारी वास्तविकता समझ चुके थे। वे यह बात भी समझ चुके थे कि गुरू अंगद देव जी को ईर्ष्यावश नगर में से निकलवाने का महा अपराध भी शिवनाथ ने करवाया था। वास्तविकता सामने आ गयी और वह नियंत्रण से बाहर हो गये। उन्होंने शिवनाथ को गले से पकड़ कर खींचा। खींचातानी में ऐसा घसीटा कि वह मर गया। प्रभु की अपार कृपा हुई, इस समय खडूर साहिब में आसमान पर बादल छा गये और भरपूर वर्षा हुई। पुरातन ग्रंथों में यह भी लिखा मिलता है कि (गुरू) अमरदास जी ने सहज स्वभाव यह कह दिया था कि वर्षा केवल उन खेतों पर होगी जिन में शिवनाथ का मुर्दा शरीर घसीटा जायेगा। सूर्य अस्त होने से पहले ही किसान खींचातानी करके शिवनाथ के मुर्दा शरीर को अपने खेतों में घसीटने लगे। कुछ भी हो, इस घटना से(गुरू) अमरदास जी की गुरू अंगद देव जी के प्रति अनन्य श्रद्धा और भक्ति भावना स्पष्ट झलकती है। गुरू अंगद देव जी को जब इस कारवाई के बारे में पता चला तो आपने (गुरू) अमरदास जी तथा खडूर साहिब के जमींदारों के इस कर्म को बिल्कुल ही स्वीकार न किया। (गुरू) अमरदास जी ने तो अपने सतगुरू को पूरा किया था और सतगुर के संग ईर्ष्या करके उनका निरादर करने वाले को उसके किये का फल भुगताया था पर गुरू अंगद देव जी ने क्षमा करने का महान् उपदेश दृढ़ करवाना था। गुरमत का उपदेश तो स्पष्ट है कि यदि करामाती शक्तियों द्वारा किसी को अथवा लोगों को झुका लिया जाय तो इस में लाभ की जगह पर हानि अधिक होती है। इस में मन में अहं तथा अहंकार पैदा होता है। इस प्रकार मनुष्य अपनी ऊंची आत्मिक अवस्था से नीचे आ गिरता है।

उपरोक्त साखी में जहां साहिब श्री गुरू अंगद देव जी के महान् व्यक्तित्व के उच्च आत्मिक गुणों के दर्शन होते हैं, वहां साथ ही (गुरू) अमरदास जी की अपने सतगुरू के प्रति अगाध श्रद्धा तथा भक्ति के दीदार भी स्वत: ही हो जाते हैं।

(8) गोइंदवाल की स्थापना तथा विकास

क्षत्रीय जाति का गोइंदा व्यास नदी के किनारे, जहां दिल्ली से लाहौर जाने वाली शाही सड़क गुज़रती थी, एक नगर बसाना चाहता था। वह बहुत सी ज़मीन का मालिक था। व्यास नदी को पार करने का किनारा होने के कारण व शाही सड़क पर होने के कारण यह बड़े मौके वाली जगह थी। गोइंदे के विरोधी

यह नहीं चाहते थे कि गोइंदा कोई नगर बसा सके। उन्होंने गहरी चालों से नगर बसाने की राह में रूकावटें खड़ी कर दीं।

यदि दिन को निर्माण कार्य होता तो रात को गिरा दिया जाता। बड़े स्तर पर लोगों में यह फैला दिया गया कि वहां पर भूत–प्रतों का वास है, जिसके कारण मकान गिर जाते हैं। गोइंदे को भी यह भ्रम हो गया। नगर बसाने के लिए यह स्थान हर लिहाज़ से बहुत रमणीय, खूबसूरत तथा बहुत मौके का था। गोइंदा गुरू अंगद साहिब के चरणों में हाज़िर हुआ और अपनी कामना प्रकट की। गुरू अंगद देव जी ने सिख की याचना पूरी करने के साथ-साथ लोगों का तथा गोइंदे का यह भ्रम भी दूर करने का निश्चय कर लिया कि वह जगह भारी है और वहां पर भूत–प्रेतों का वास होने के कारण; बस नहीं सकती। अपने अनन्य सेवक (गुरू) अमरदास जी को अपने पास बुला लिया। (गुरू) अमरदास जी की योजना के अनुसार सन् 1546 में नगर का निर्माण कार्य आंरभ हो गया और नगर दिन दूगना रात चौगुना तरक्की करने लग गया.। गोइंदे ने अपनी आधी ज़मीन तो वैसे ही गुरू साहिबान को अर्पित कर दी थी। लोगों में फैले हुए भ्रम-भुलेखे भी दूर हो गये। वैसे, यह नगर बसाने में गुरू अंगद देव जी के दो अन्य बड़े प्रयोजन भी थे। प्रथम यह कि आने वाले समय में सिख मत का मुख्य प्रचार केन्द्र खडूर से गोइंदवाल स्थानांतरित कर लिया जाय जिससे कुदरती तौर पर और अधिक क्षेत्र सीधे तौर पर सिख केन्द्र से संबधित हो जाना था और समय पा कर ऐसा ही हुआ।

सतगुरू साहिबान का इस प्रकार का नगर बसाने का द्वितीय प्रयोजन यह था कि सिख-प्रभाव का नगर स्थापित किये जाये जिनमें सिख सभ्यता तथां गुरमत रहत मर्यादा अधिक कारगार ढंग से प्रचलित हो सके। यह योजना अपने आप में बहुत महत्त्वपूर्ण है। पुराने नगरों की जगह पर नये नगरों में नवीन मर्यादा बांधने में तथा नवीन नियम और रीतियां लागू करने में अधिक अनुकूलता मिल जाती है, यह समूचे तौर पर नवीन मत के प्रचार में सहायक सिद्ध होती है।

आज हम इस दृष्टिकोण के महत्त्व को नहीं समझ रहे और इस पक्ष से कई प्रकार की हानि भी उठा रहे हैं। यदि गुरमत व सिख प्रभावी नवीन कालोनियां, नगर तथा गांव इस ढंग से बसाने की योजना बनायें कि उनमें गुरमत धारणी बहुत संख्या में भारी होकर विचरण कर सकें तो निश्चित तौर पर इस से सिख मर्यादा तथा सिख संस्कृति के फैलने तथा विकसित होने में बहुत मदद मिल सकती है। बहुत दूर-दूर मिश्रित ढंग से बसे होने के कारण हमारी अगली पीढ़ी के मनों पर स्वत: ही पराधर्मियों की सभ्यता भारी होने लग गयी है। मिश्रित आबादी की जगह पर खालसा आबादी सिखी के प्रचार प्रसार में अधिक लाभकारी हो सकती है। गोइंदवाल आदि नगरों के निर्माण के पीछे यह विचार भी किसी हद तक ज़रूर काम करता रहा है कि नवीन बस रहे नगरों को इस ढंग से विकसित किया जाये कि वहां पर सिखी मर्यादा तथा सभ्यता भारी हो कर बढ़ फूल सके।

नया नगर बसाने तथा विकसित करने में इमारती लकड़ी की कमी बहुत कठिनाई पैदा कर रही थी। (गुरू) अमरदास जी ने अपने भतीजे सावण मल को, जो कांगड़ा हरीपुर आदि पहाड़ी इलाकों में सिखी का प्रचार करते थे, पहाड़ी इलाकों से इमारती लकड़ी का प्रबंध करने को कहा। पहाड़ी इलाके के लोग पहले वैरागी साधुओं को मानते थे, पर सावण मल जी ने सिखी के असूलों का प्रचार अपने व्यावहारिक जीवन द्वारा किया। परिणाम यह हुआ कि वहां के अनेकों निवासियों ने सिखी धारण कर ली। हरीपुर का राजा भी अपने अमीरों-वज़ीरों सहित सिख बन गया। गोइंदवाल के निर्माण के लिए जितनी भी इमारती लकड़ी की आवश्यकता थी, वह खुले दिल से हरीपुर के राजा ने (गुरू) अमरदास जी को भेज दी। आप ने यह लकड़ी सभी नगर वासियों तथा बसने वाले नये लोगों को बांट दी। कुदरती

बात थी कि इससे निर्माण कार्य बहुत तेज़ी पकड़ गया और गोइंदवाल एक सिख नगर की शक्ल अख्तियार कर गया।

गोइंदवाल के विकास के द्वारा सिखी की चढ़दी कला ने भट्ट विद्वानों के मनों पर इतना प्रभाव डाला कि उन्होंने गोइंदवाल को "गोबिंदपुरी" भाव "ईश्वर की नगरी" कह कर सम्मानित किया। इस प्रकार गुरू अंगद देव जी ने अपने धर्म सेवक (गुरू) गुरू अमरदास जी से दीर्घ दृष्टि द्वारा एक ऐसे सिख नगर की स्थापना करवाई, जो सिख मत तथा सभ्यता के प्रचार-प्रसार हेतु बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ।

(9) परिश्रम करने के सिद्धांत पर पहरा देना

वास्तविकता यह है कि हम अभी तक अपने सतगुरू साहिबान का जीवन इतिहास में (द्वारा) ठीक ढंग से लोगों के सामने प्रस्तुत नहीं कर सके हैं। सतगुर साहिबान के महान् व्यक्तित्वों को हम इस ढंग से पेश करते रहे हैं जैसे कि वे हिंदू मत के संत–साधु प्रकट हों।

यह तो सर्वविदित है कि "परिश्रम करना, बांट कर खाना तथा नाम का जाप करना" सिखी जीवन युक्ति का मुख्य आधार है। करतारपुर साहिब में लगभग 18 वर्ष के समय तक गुर नानक देव जी ने अपने जीवन के पिछले दिनों में इस सिद्धांत को व्यावहारिक दृष्टांत देकर समझाया। आप ने खेती-बाड़ी करने के पवित्र पेशे को अपनाया और बांट कर खाने तथा नाम सिमरन के सिद्धांत को व्यावहारिक तौर पर प्रचारित किया।

सब को पता ही है कि गुरू अंगद देव जी के लंगर में बहुत अच्छी, बढ़िया तथा साफ खुराक हर किसी को उपलब्ध की जाती थी। सत्ते तथा बलवंड की वार में तो लंगर में नित्य प्रति बांटी जाने वाली घी वाली मीठी खीर का स्पष्ट वर्णन आता है। लंगर के बढ़े हुए व्यय, सिखी के अनेकों केन्द्रों से एकत्र हुए दसवंध (दशांश) द्वारा आसानी से पूरे हो जाते थे।

लंगर का एक प्रयोजन, जहां मानव समाज में से ऊंच-नीच या जाति-पाति को जड़ से दूर कर के लोगों में परस्पर प्यार पैदा करना था, वहीं इस के द्वारा परिश्रमी सिखों में दसवंध निकालने तथा बांट कर खाने का सिद्धांत भी दृढ़ होता था। लंगर मुख्य तौर पर ज़रूरतमंदों, निराश्रितों, अंगहीनों या अन्य कारणों से असमर्थ लोगों को आदर सहित खुराक उपलब्ध करता था। इस के अतिरिक्त बाहरी क्षेत्रों तथा दूर-दराज की जगहों से गुरू साहिब से आत्मिक तथा धार्मिक राहनुमाई लेने के लिए आये श्रद्धालु गुरसिखों के लिए भी यह बहुत लाभदायक था। बाहर से आई संगत को आत्मिक उपदेश के साथ-साथ साफ–सुथरी तथा अच्छी खुराक मिल जाना, सब सिखों के लिए उत्साहवर्धक बात थी।

तवारीख खालसा का कर्त्ता गुरू साहिब की जूट की रस्सियां बनाने की क्रिया के अलावा बड़े साफ शब्दों में गुरू जी की निजी आमदनी के एक और स्रोत का भी वर्णन करता है। यथा:

"वासू ते वातू जी दी हट्टी में जो कुछ पैदा होवे, उसे विच गुज़ारा करना"। पूजा के धान का प्रयोग संबंधी उन्होंने अपने साहिबज़ादों को बड़ी सख्त हिदायतें दे रखी थीं जो तवारीख खालसा के अनुसार इस प्रकार है: **"जे कदे (गुरू साहिब के साहिबज़ादे) "कुछ चाहुण, तां गुरू जी आखण," इह पूजा दा धान गृहस्थी नूं कधा पारा। जो भुखा प्यासा विहंगम साधू सिख, लंगड़ा, लूला, रोगी, वृद्ध इहनों पास आवे, उस दी विशेष सेवा कराऊण।"**

"सवानि-उमरी गुरू अंगद देव जी" का कर्त्ता भी गुरू साहिब की इस मामले में अपने साहिबज़ादों को की गयी सख्त हिदायत को इस प्रकार दर्शाता है, **"उन्होंने अपने बेटों को हुकम दें रखा था कि तुम आपनी मुआशा दुकानदारी या काश्तकारी से हासल करो। यह पूजा का माल तुम्हारे लिए ज़हरे कातल है। चुनांचे वोह उनके इर्शाद के मुआफ्क अमल करते थे।"**

(10) गुरिआई के दौरान हुई कुछ मुलाकातें तथा उपदेश

लंगर की मर्यादा द्वारा भ्रातृभाव तथा आपसी प्यार पैदा करना

गुरू नानक देव जी की बाणी में संसार की समूह मानवता को जाति पाति, लिंग, प्रांत, देश, नस्ल, रंग आदि के भेद-भावों को एक ओर रख कर, एक सांझे पिता-परमेश्वर की संतान होने का ज़ोरदार विचार दिया गया है और इसलिए सभी मनुष्य आपस में भाई-भाई हैं। स्मृतियों के मत द्वारा प्रचारित ऊंच–नीच की भावना का गुरू नानक साहिब की बाणी में भी विरोध किया गया है और उन भक्तों की बाणी में भी इसका विरोध किया गया है जिनकी बाणी गुरू नानक देव जी ने अपने संग्रह में एकत्र कर रखी थी।

लंगर की मर्यादा का आरंभ तो गुरू नानक देव जी ने करतारपुर में ही कर दिया था पर गुरू अंगद देव जी के दरबार, खडूर साहिब में इसको और अधिक महत्त्व दिया गया। लंगर वास्तव में वर्ण-आश्रमी के मत द्वारा प्रचारित ऊंच-नीच के भेदभाव को मार मिटाने के लिए सबसे अधिक प्रभावकारी साधन सिद्ध हुआ। बाणी के प्रचार द्वारा तो ऊंची-नीची जातियों के भेदभाव तो मिटते ही थे, पर लंगर की मर्यादा ने उच्च स्तरीय हिन्दुओं के "सुच्चे चौके" के भ्रम पर तो कठोर वार कर दिया। लंगर में सब लोग आपस में एक पंक्ति में बराबर हो कर बैठ्ते थे। यहां किसी भी जाति के संग कोई विशेष व्यवहार नहीं किया जाता था और इसी प्रकार लंगर तैयार करने में भी हर व्यक्ति शामिल हो सकता था, केवल सफ़ाई के नियमों का पालन और श्रद्धा भावना की आवश्यकता थी।

लंगर की मर्यादा के कारण सिखों में अपनी आय का दशांश निकालने की रीति आरंभ हो गयी। बांट कर खाने के उपदेश पर अमल करने तथा भ्रातृभाव बढ़ाने में भी लंगर की मर्यादा ने बहुत सुंदर योगदान दिया। सिखी की व्यावहारिक कमाई में सेवा को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। लंगर की मर्यादा ने सिखों में सेवा भावना को उजागर करने में प्रधान रोल अदा किया है।

गुरू अंगद देव जी के महिल (पत्नि) माता खीवी जी ही लंगर का सारा प्रबंध चलाते थे। वे सदा लंगर की सेवा में व्यस्त रहते थे। लंगर पूर्ण स्वच्छता तथा श्रद्धा से तैयार किया जाता था। गुरू अंगद देव जी के लंगर में पौष्टिक खुराक की दृष्टि से अच्छे पौष्टिक पदार्थ बांटे जाते थे। सत्ते तथा बलवंड की वार में माता खीवी जी की ओर से इस लंगर में घी वाली खीर बांटे जाने का वर्णन है। माता खीवी जी कि हिदायत के अनुसार भाई किदारा तथा भाई जोध रसोइआ आदि गुरसिख भी लंगर की सेवा करते थे।

ऊंच-नीच के भेदभाव को दूर करने तथा बांट कर सेवन करने की प्रेरणा देने के साथ-साथ लंगर एक और बड़ी सामाजिक आवश्यकता को पूरा करता था। निराश्रित, ज़रूरतमंद, असमर्थ या अंगहीन लोग इज़्ज़त से प्रसाद सेवन कर सकते थे। इसके अलावा परदेसियों, मुसाफ़िरों तथा बाहर से आये गुरू घर के श्रद्धालुओं की आवश्यकताओं की पूर्ति भी लंगर से हुआ करती थी। सिख लहर को लोक–प्रियप्यारा तथा मशहूर बनाने में लंगर की मर्यादा ने बहुत सहायता की। इस प्रकार लंगर की मर्यादा ने सिखी के प्रचार में बहुत अच्छा योगदान डाला।

लंगर की मर्यादा द्वारा सिखों में अपने मत के स्वतंत्रत, विलक्षण तथा संपूर्ण होने की चेतना का विकास हुआ, जिसने इस मत के पैरोकारों में अपने स्वतंत्र व भिन्न आस्तित्व का विचार उत्पन्न किया।

मन तथा तन की मज़बूती का प्रचार व मल्ल अखाड़े

गुरू अंगद देव जी इस बात को भली–भांति समझते थे कि मज़बूत तथा अरोग्य शरीर में ही शक्तिशाली मन निवास कर सकता है। हिन्दुस्तान के अधिकतर मत-मतांतर शरीर को संभालने, इसको

पुष्ट तथा मज़बूत रखने को मिथ्या कर्म ही समझे बैठे थे। गुरमत में शरीर को अनावश्यक तथा बेकार के कष्टों में डालकर गलाने तथा कमज़ोर करने को बुरा समझा गया है। शरीर को मरियल टट्टू जैसा बना कर खींचते फिरना किस अर्थ ? यदि शरीर मज़बूत तथा अरोग्य होगा तो उसके द्वारा हम सेवा भी अधिक कर सकेंगे तथा सिमरन में भा मन लगा सकेंगे। रोगों का मारा हुआ शरीर सिमरन करेगा तो क्या सेवा में हिस्सा ले सकेगा ? अच्छी आदतें, अच्छी खुराक, अच्छा रहन-सहन, सफाई, स्नान तथा व्यायाम आदि के नियमों द्वारा ही हम अरोग्य शरीर के मालिक हो सकते हैं। काम तथा क्रोध को गला देते हैं। अंदर तथा बाहर से निर्मल रहना आवश्यक है, स्नान शरीर को सावधान तथा चुस्त रखता है। इनके द्वारा शरीर अरोग्य तथा बलवान रख कर ही सेवा सिमरन की राह पर चलने की ताकीद की गई है।

शारीरिक व्यायाम शरीर को अरोग्य रखने तथा इसको मज़बूत बनाने में बहुत सहायक सिद्ध होता है। गुरू अंगद देव जी ने इसी आशय से खडूर साहिब में मल्ल अखाड़ा स्थापित किया। वहां पर रोज़ाना गुरू साहिब अपने सिखों को, और विशेष करके बच्चों को कुश्तियां करवाया करते थे। सुबह के दीवान के अनुसार गुरमत प्रचार के प्रत्येक केन्द्र के साथ कुश्ती, कबड्डी लड़ने तथा व्यायाम करने के लिए व्यायामशालाएं थीं। सिखों में शारीरिक मज़बूती, दृढ़ता, सिपाहीगीरी की बेमिसाल योग्यता तथा फ़ौजी टक्कर का जो असीम बल, बाद के इतिहास में दिखाई देता है, उस सब का जन्मदाता 'मल्ल अखाड़ा' ही था। मन की मज़बूती के लिए बाणी तथा सतसंग बड़े साधन थे, पर मज़बूत मन के टिकने के लिए मज़बूत शरीर की सृजना शारीरिक व्यायाम द्वारा ही हो सकती है।

युद्धों में जूझने के बारे में मालू शाह को उपदेश

गुरू अंगद देव जी का एक सिख, मालू शाह जो सैनिक जीवन व्यतीत कर रहा था, एक बार गुरू साहिब के पास अपनी शंका निवारण हेतु आया। भजन बंदगी संबंधी विचार सुन-सुन कर उसके मन में शंका उत्पन्न हो गयी कि सैनिक जीवन में केवल पाप ही पाप है।

गुरू जी ने मालू शाह को इस बारे में ज़रूरी बातें समझा कर अपने सैनिक जीवन में उत्साह से धर्म कमाने की प्रेरणा दी। आपने फरमाया कि लड़ाई किसी पर ज़ोर, धक्का, ज़ुल्म या अत्याचार करने के लिए नहीं लड़ी जानी चाहिए, धर्मात्मा व्यक्ति ने जंग, धर्म की रक्षा हेतु, ग़रीब मज़लूम की सहायता हेतु तथा ज़ुल्म करने वालों को ज़ुल्म से रोकने के लिए लड़नी है। यत्न करना चाहिए की धर्म विरोधी तत्व, बिना युद्ध के, प्रेम प्यार से समझ सके और दूसरों पर ज़ोर, धक्का तथा ज़ुलम से हट जाये, पर दुष्ट प्रेम प्यार तथा तर्क से गलत राह त्यागने को तैयार न हो तो धर्मात्मा मनुष्य को पूर्ण उत्साह से निश्चिंत होकर दुष्ट धर्म विरोधी के साथ जूझ जाना चाहिए। फिर जूझते समय परिणाम की प्रवाह न करे और जान हथेली पर रख कर दुष्ट से हथियार छुड़वा कर दम ले। अन्य साधनों से जब दुष्ट सही राह पर न आये तो उस पर शस्त्र प्रहार करना पाप नहीं, बल्कि धर्म का काम है। शस्त्र विद्या का अभ्यास करना तथा शरीर को बलवान बना कर रखना, इसलिए ज़रूरी है ताकि आवश्यकता पड़ने पर धर्म की रक्षा की जा सके और ग़रीब, मज़लूम तथा निराश्रित को दुष्ट के ज़ोर ज़बर से बचाया जा सके। मनुष्य का कमज़ोर और बुज़दिल होना ही वास्तविक पाप है। धर्म तथा शूरवीरता का तो अच्छा सुमेल बनता है।

हुमायूं बादशाह की गुरु अगंद देव जी के साथ मुलाकात

"महिमा प्रकाश", "सूरज प्रकाश", "तवारीख-ए-पंजाब" (कन्हैया लाल की) में तथा साथ के साथ चलने वाली सिख परम्पराओं में हुमायूं बादशाह की गुरू अंगद देव जी के साथ हुई मुलाकात का वर्णन आता है।

सिख परम्परा के अनुसार हुमायूं, शेरशाह सूरी से कन्नौज के युद्ध में अंतिम हार खा कर आगरा से भाग जाने को मजबूर हुआ। सुलतानपुर पहुंच कर उसके मन में गुरू अंगद देव जी के दरबार, खडूर

साहिब की हाज़री भरने की इच्छा उत्पन्न हुई, ताकि सतगुरू साहिबान के दर्शन करके राजभाग पुनः प्राप्त करने के लिए आशीर्वाद प्राप्त किया जा सके। उस ज़माने में शाही सड़क खडूर साहिब के पास से ही निकलती थी। सन् 1540 में जब हुमायूं अपने फ़ौजी दस्ते सहित खडूर साहिब पहुंचा तो गुरू अंगद देव जी उस समय बच्चों की कुश्तियां करवा रहे थे। हुमायूं के आने के बावजूद, आप अपने काम में व्यस्त रहे। वैसे भी गुरू अंगद देव जी स्वतंत्र स्वभाव के मालिक थे और सदा ईश्वर के संग जुड़े रहने के कारण बेपरवाह थे। हुमायूं ने इसमें अपना अपमान महसूस किया और गुस्से में आकर उसका हाथ तलवार की मुट्ठी पर चला गया। गुरू अंगद देव जी ने बड़ी निर्भयता तथा बहादुरी से हसंते हुए कहा, "जब मैदाने जंग में तुझे शेरशाह सूरी के मुकाबले पर तलवार चलाने की आवश्यकता थी, उस समय तो तूं तलवार चला नहीं सका और अब तूं फ़कीरों-दरवेशों पर तलवार चलाना चाहता है।" हुमायूं इन वचनों से बहुत शर्मिंदा हुआ और उसने अपनी भूल की क्षमा मांगी। गुरू जी ने उसको सब्र–संतोष में रह कर खुदा का आसरा लेने का उपदेश दिया।

शराब आदि नशों से वर्जित और चौधरी मलूका

गुरू अंगद देव जी ने गुरू नानक देव जी का सीधा-सादा तथा आदर्शक जीवन ढंग लोगों के सामने प्रस्तुत किया। लोगों को शराब आदि नशों से वर्जित किया। यह नशा स्वास्थ्य के लिए अति–हानिकारक है और कई प्रकार के रोगों का जन्मदाता तथा प्रेरक है। आत्मिक उन्नति की राह में यह नशा भारी रुकावट खड़ी करता है। यह नशा करने से बुद्धि मारी जाती है और उचित–अनुचित या अच्छे–बुरे की तमीज़ नहीं रहती है, बुरी संगत इस नशे के लिए प्रेरणा करने तथा इसको स्वभाव का अंग बना कर पक्का करने का एक बड़ा कारण बनती है।

खडूर साहिब में गुरू दरबार की संगत में रहने वाले, बीबी विराई के प्रति चौधरी महिमे ने गुर उपदेश के द्वारा अपना जीवन ऊंचा व निर्मल बना लिया। अच्छी संगत में रहने के कारण खडूर साहिब के चौधरी तख्त मल खहरे ने अति पवित्र सिखी जीवन व्यतीत करना आरंभ कर दिया और अपने मन में सिख संगतों की सेवा के लिए चाव तथा उत्साह पैदा कर लिया। चौधरी तख्त मल गुरू के लंगर में नित्य प्रतिदिन दुध पहुंचाने की सेवा करने के साथ साथ आये गये परदेसी सिखों की सेवा संभाल करना अपने अहोभाग्य समझता था।

उपरोक्त चौधरियों की रिश्तेदारी में ही एक चौधरी मलूका भी था, जो खडूर साहिब के जोगी की संगत करता था। "तवारीख खालसा" ने इसका नाम मलूका दिया है जब कि "स्वानि उमरी गुरू अंगद देव जी" ने इसका नाम जवाहर मल लिखा है। जहां सिख मत नशों का सेवन वर्जित करता है, वहीं जोगी शराब आदि नशों को सुरति एकाग्र करने का साधन बताते थे और स्वयं गलत राह पर पड़ कर लोगों को भी उल्टी राह पर डालते थे। शराबी जोगी की कुसंगत ने मलूके को नशों का आदी बना दिया। मलूका शारीरिक तौर पर रोगी हो गया। कई रोग लग गये। मिरगी के दौरे पड़ने शुरू हो गये। कोई इलाज कारगर सिद्ध न हुआ। चौधरी मलूका वैसे गुरू घर का विरोधी था पर मिरगी से बहुत दुःखी होकर अपने संबंधियों द्वारा प्रेरित होकर गुरू अंगद देव जी के पास हाज़िर हुआ। गुरू जी ने पूर्ण तौर पर शराब छोड़ कर इलाज करवाने का उपदेश दिया। मिरगी के दौरे पड़ने हट गये। दिल मन में तो यह शराबी जोगी का श्रद्धालू था और गुरू घर का विरोधी भी था। कुछ दिन के पश्चात् फिर अपनी असल जगह पर पहुंच गया। जोगी की बुरी संगत ने फिर पुरानी आदत को जागृत कर दिया। मलूका शराब पी कर अपने मकान की छत पर चढ़ गया और गाली गलोच बकने लगा। मिरगी ने फिर आ घेरा और मकान की छत से गिर कर चौधरी मलूका मर गया।

बुरी संगत में बुरी आदतें पड़ जाती हैं और ये आदतें शनैः-शनैः पक कर स्वभाव का अंग बन जाती हैं। इन बुरी आदतों को छोड़ना ही कठिन हो जाता है। छोड़ने का यत्न कई बार इसलिए बेकार

हो जाता है कि बुरी संगत में पके हुए बुरे संस्कार फिर जागृत हो जाते हैं। शायद ऐसी घटनाओं को देख कर ही गुरू अमरदास जी ने गुरिआई की ज़िम्मेवारी संभालने के दौरान अपने सिखों के प्रति नीचे लिखे श्लोक उचार कर शराब आदि नशों से सख्ती से वर्जित किया था। यथा :

"माणस भरिआ आणिआ, माणसु भरिआ आइ ॥
जितु पीते मति दूरि होइ, बरलु पवै विचि आइ ॥
आपणा पराईआ न पछाणई, खसमहु धके खाइ ॥
जितु पीतै खसमु विसरै, दरगह मिलै सजाइ ॥
झूठा मदु मूलि न पीचई, जे का पारि वसाइ ॥
नानक नदरी सचु मदु पाईऐ, सतिगुर मिलै जिसु आइ ॥
सदा साहिब कै रंगि रहै महली पावै थाउं ॥"

सांसरिक बड़प्पन का गर्व तथा चौधरी बख्तावर

सन् 1547 के करीब गुरू अंगद देव जी ने मालवा का एक छोटा सा प्रचारक दौरा किया। अपने पुराने इलाके, मत्ते दी सरां आदि से होकर गांव हरीके आ पहुंचे। बहुत पहले हरीके में आपने कुछ समय तक दुकानदारी का काम किया था। यहां के लोग इस कारण वैसे भी आपको अच्छी तरह जानते थे।

यहां का मुखिया चौधरी बख्तावर था। यह एक मायावादी और अहंकारी आदमी था। 72 गांवों का लगान भरने के कारण इसको अपने आर्थिक स्तर पर बहुत गर्व था। वह माया के गर्व सेमदमस्त हुआ गुरू अंगद देव जी को मिलने आया। उसने गुरू अंगद देव जी की आत्मिक महिमा भी लोगों से बहुत सुन रखी थी। उसके अहंकार भरे आचरण को सिखों ने कतई पसंद नहीं किया। वह धनवान होने के कारण अपने आपको आत्मिक जगत में भी चौधरी समझे बैठा था। वह संगत में बैठे ग़रीब तथा नीच जाति के सिखों के बराबर बैठने को तैयार नहीं था। वह केवल माया की बहुतायात के कारण अपने आपको बड़ा समझता रहा था।

गुरू जी ने उसको बड़े प्रेम सें समझाया कि यह सांसरिक सम्मान झूठा हैं और यह सांसरिक सम्मान तो बल्कि भट्टी में डालने योग्य है, क्योंकि जब तक सांसरिक सम्मान हमारे मन में कायम हैं, उच्च आत्मिक अवस्था पैदा ही नहीं हो सकती और न ही हम परमेश्वर का नाम सिमरन करने की ओर ही लग सकते हैं। परमेश्वर के आगे तो न हमारा जाति अभिमान काम आ सकता है और न ही ज़ोर ज़बरदस्ती द्वारा उसके आगे हम अच्छे कहलवा सकते हैं। अच्छे तो हम तभी कहलवा सकते हैं यदि परमेश्वर हमारी अच्छाई को स्वीकार करे। परमेश्वर के सामने अच्छा बनने के लिए हमें दिल मन से अच्छा तथा नेक बनना होगा और सांसरिक प्राप्तियों का झूठा गर्व मन में से निकालना होगा। चौधरी बख्तावर गर्व छोड़ कर गुरू उपदेश का धारणकर्त्ता हो गया और संगत की सेवा करने लगा।

मायाधारी लोगों से आजकल के तिजारती रुचियों वाले साधु तथा देहधारी गुरू बुरी तरह कतराते हैं। उनकी आर्थिक तथा अहंकारी वृत्ति को निरर्थक तथा हानिकारक बताना तो कहीं रहा, उनकी चाटुकारिता करते हुए नहीं थकते तथा उनके आगे यों यों करते फिरते हैं। दलेरीपूर्वक से सत्य को सत्य तथा कच्चे को कच्चा कहने को तैयार नहीं होते। जैसे-जैसे उनको श्रद्धालु मिलते हैं, वैस-वैसे वे नियम तथा मर्यादा बनाते जाते हैं। 'गंगा गए गंगा राम, जमना गऐ तो जमना दास' नाम धरना उनका राम बाण है, जिससे वे अपना शिकार करते ही रहते हैं। सच्चाई पर दृढ़ता से पहरा देना और सच्चाई के लिए निर्भय होकर विचरण करना मर्द पुरुष, गुरू अंगद पातशाह के ही हिस्से आता है।

रज़ा में राज़ी रहने का उपदेश

खडूर से तीन मीलों की दूरी पर भाई जीवा तथा उसकी सुपुत्री जिवाई रहते थे। बीबी जिवाई गुरू घर के लिए रोज़ खिचड़ी तैयार करके लाया करती थी। एक दिन ज़ोर की आंधी आई। आंधी के कारण खिचड़ी तैयार करने में कठिनाई पेश आई। बीबी जिवाई ने परमेश्वर के सम्मुख अरदास शुरू कर दी कि आंधी हट जाये ताकि खिचड़ी पका कर लंगर में भेजी जा सके।

गुरू अंगद देव जी को जब यह पता चला कि बीबी जिवाई परमेश्वर की रज़ा को राज़ी होकर मानने की जगह पर उसके विपरीत सोचती रही है तो आपने बड़े प्यार से बीबी को रज़ा वाले गुरमत सिद्धांत पर दृढ़ करवाया। बीबी जिवाई को सतगुरू साहिबान ने कहा कि पुत्री ! परमेश्वर जो करता है, ठीक करता है। उसने अपनी रज़ा में सारी प्रकृति तथा सृष्टि को चलाना है। परमेश्वर का प्यार हृदय में बसाने के लिए आवश्यक है कि हम उसकी रज़ा को सदा खुशी से मानें।

साहिब श्री गुरू नानक देव जी जपुजी की बाणी में, जो सिखों के रोज़ाना नितनेम की बाणी है, रज़ा संबंधी चार बार यह पवित्र शब्द दुहराए हैं :-

"जो तुधु भावै साई भली कार'

फिर, सच्चा बनने तथा झूठ की पोल तोड़ने के लिए भी रज़ा के मालिक के हुकम में खुशी में चलने का उपदेश दिया है।

जाति-अभिमान को मारने के लिए भाई जोध देवता का आश्चर्यजनक तरीका

गुरू अंगद देव जी के सतसंग से प्रभावित होकर एक बार एक ब्राह्मण जोध ने सदा के लिए ही गुरू साहिब के चरणों में रह कर जीवन सफल करने का इरादा बना लिया। वह अति-पवित्र जीवन का धारणकर्त्ता और ऊंचे आचार व्यवहार का पुरुष था। माता खीबी जी तथा बीबी विराई ने लंगर का प्रबंध बहुत सुंदर बना रखा था। चौधरी तख्त मल के अलावा गांव के कई ज़िमींदार दूध, अन्न, दाल आदि की सेवा करते थे। भाई जोध ने लंगर की सेवा की अधिकतर ज़िम्मेवारी अपने सिर पर ले ली थी। वह बड़ी सफ़ाई से लंगर तैयार करने से लेकर, जूठे बर्तन मांजने तथा लंगर के खर्चे आदि का हिसाब-किताब भी रखने की सेवा करता था। इस सब के पीछे उसकी अभिलाषा यह थी कि हर ऊंची नीची जाति के लोगों की सेवा करके अपने मन में जाति अभिमान आदि की जन्म–जन्मांतरों की मैल को धो सके। दिन रात इतनी कड़ी सेवा करने के पश्चात् भी वह अपना भार गुरू के लंगर पर डालना ठीक नहीं समझता था। वे संगत के लंगर सेवन कर लेने के पश्चात् उनके जूठे बर्तनों में से बची हुई जूठन को बिल्कुल गुप्त रूप से किसी कोने में बैठ कर सेवन कर लेता। इस बात की किसी को खबर न होने देते।

अचानक माता खीबी जी को एक दिन भाई जोध की इस आश्चर्यजनक साधना का पता चल गया। माता जी भाई बुड्ढा जी को साथ लेकर गुरू अंगद देव जी के पास पहुंच गये। माता जी यह सब कुछ सहन न कर सके कि गुरू घर का इतना बड़ा सेवक इस ढंग से उदरपूर्ति करे। गुरू अंगद देव जी ने भाई जोध को अपने पास बुला भेजा। भाई जोध ने मामले को टालने के बहुत प्रयास किये, पर गुरू जी ने उसकी पेश न जाने दी।

भाई जोध ने एक बात तो यह बताई कि वह गुरू घर पर अपना बोझ नहीं डालना चाहता था और दूसरे बात यह बतायी कि जाति का ब्राह्मण होने के कारण उसमें जाति अभिमान बहुत था। गुरू घर के उपदेश के अनुसार इस प्रकार के अभिमान को मारे बिना आत्मिक रस नहीं आ पाता। यह सब सोच कर वे लंगर में हर नीचे ऊंचे मनुष्य के लिए प्रसाद तैयार करता था उनके झूठे बर्तन साफ करता था। भाई जोध के विचारा अनुसार जात पात तथा छुआछुत के भूत को पूरी तरह मन में से निकालने के लिए

वह संगत में आये प्रत्येक ऊंचे-नीचे व्यक्ति की जूठ खाने का काम कर रहा था। आत्मिक राह के एक सच्चे राहगीर की यह साधना सचमुच ही अनोखी तथा अजीब थी।

सिख मत एक सामाजिक धर्म था। भाई जोध का आशय अच्छा होने के बावजूद सतगुरू साहिबान ऐसी मर्यादा को अपने सिखों के लिए पूरी तरह अनुपयुक्त समझते थे। भाई जोध को आगे से इस प्रकार की जूठ खाने से रोकने के लिए यह कह दिया गया कि भाई जोध देवता जी, अब तो तुम्हारे मन में तथा शरीर में सच्चा परमेश्वर बसता है, इसलिए इस बात को ध्यान में रख कर शरीर को जूठा अन्न देना बंद कर दो और अब आगे से सुच्चा भोजन सेवन करो। कुछ भी हो, सिख ने ब्राह्मणों के घर में जन्म लेकर भी जाति अभिमान जैसे बड़े दोष को अपने मन में से पूरी तरह निकाल दिया था।

दिखावे के रीति–रिवाज़ों से शीहें उप्पल को रोकना

शीहां उप्पल, जिस ने गुरू नानक देव जी से सिखी धारण की थी, के घर पुत्र ने जन्म लिया। लोक–दिखावे के कारण उसकी पत्नि ने प्रचलित भेड़ चाल के अधीन इस खुशी के अवसर पर एक समारोह बरादरी हेतु करने का फ़ैसला किया। इसलिए प्रचलित भ्रमों द्वारा भरे विश्वासों के अधीन, मर चुके बुजुर्गों की पूजा के नाम पर उसने सारी बिरादरी को बकरों की कुर्बानी देकर उनके मास से भोजन करवाना था।

गुरू अंगद देव जी ने शीहें को लोक–दिखावे तथा भ्रमों के इस कुकर्म को करने से वर्जित कर दिया और खुशी के इस समारोह को संगत बुला कर मनाने का हुकम दिया। कुर्बानी के नाम पर बकरों को मार कर पाप लीला वाली इस रोटी से वर्जित कर दिया। ऐसे समारोह परिवार में सिखी सिद्धांत परिपक्व करने के आशय से होने चाहिएं।

भाई वीर सिंह जी के अनुसार– "यहां तक यह पाबन्दी सिखों में अब तक काम करती है कि गुरू के लंगर में मास पकाने की आज्ञा नहीं..... क्योंकि लिखा है कि गुरू के लंगर का सब कोई अधिकारी है। मास पके तो हर कोई लंगर का अधिकारी नहीं रह जाता। केवल मांसाहारी ही सेवन कर सकते हैं। यह भेदभाव गुरू घर में स्वीकार्य नहीं है।"

कुछ और मुलाकातें तथा उपदेश

एक बार जोगियों की एक मंडली गुरू अंगद देव जी के दर्शनार्थ खडूर साहिब पहुंची। जोगियों ने कई जगह पर गुरू नानक साहिब के साथ गोष्ठियां की थीं और हर बार उन्होंने अपने आप को गुरू नानक पातशाह के व्यक्तित्व के सामने बड़ा हीन–सा महसूस किया। हर गोष्ठी के समय कई जोगी उनके अनेकों श्रद्धालुओं सहित जोग मत को छोड़ कर सिखी धारण करते रहे, पर फिर भी कुछ जोगी अड़े रह कर अपने मत की साख कायम रखने के प्रयास में थे।

जब जोगियों को इस बात का पता लगा कि वे गुरू नानक, जो जीवन प्रयंत झुके नहीं थे, ने अंत समय अपने ही परम सेवक गुरू अंगद देव जी के आगे शीश झुका कर उनको अपनी गुरू गद्दी दी है तो ऐसे महापुरुष के दर्शन करके वे अपने ढंग से जांचना चाहते थे। वे जितने दिन भी खडूर साहिब में रहे, गुरू मर्यादा के अनुसार भाई अजिते, रंधावे तथा भाई बुड्ढा जी ने उनकी पूरी सेवा की तथा गुरू अंगद देव जी के महान् व्यक्तित्व में उनको साक्षात गुरू नानक के ही दीदार हुए। वे आपस में गुरू अंगद देव जी की परीक्षा लेने आये थे, पर वह गुरू अंगद देव जी में नम्रता, मिठास, परमेश्वर भक्ति तथा उसको पा लेने संबंधी स्पष्टता तथा गुरू नानक जैसी निर्भय व्यक्तित्व को देख कर दंग रह गये।

समय-समय पर अनेकों जिज्ञासु गुरू अंगद देव जी के पास आ कर ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करते, सिखी धारण करते तथा जीवन की सही युक्ति संबंधी पड़े भ्रम दूर करवाते थे।

भाई किदारू को सतगुरू साहिब ने समझाया कि विषय–विकारों तथा माया के मोह की आग से बचने के लिए सतसंग रूपी शीतल समुद्र की शरण ही लाभदायक हो सकती है।

हरिनाथ नाम के एक साधू का सतगुरू साहिबान ने यह भ्रम दूर किया कि ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों, शूद्रों आदि सब के धर्म अलग-अलग हैं। उसको सतगुरू साहिबान ने यह दृढ़ निश्चय करवा दिया कि दुनिया के हर मनुष्य के लिए आदर्शक धर्म केवल एक ही है, वह यह कि मनुष्य नेकी की राह पर चले और परमेश्वर के सिमरन में जीवन व्यतीत करे। अलग-अलग जातियों या लोगों के धर्म अलग-अलग होने की बात को सतगुरू साहिबान ने पूरी तरह रद्द कर दिया।

धरणी जाति के जग्गे को समझाया की जगत का संपूर्ण त्याग करके मनुष्य आत्मिक शांति नहीं हासिल कर सकता और न ही ईश्वर को मिलने की यह आदर्शक जीवन युक्ति हो सकती है। संसार में रहते हुए मेहनत-परिश्रम करते हुए धर्म की कमाई करना और मन सदा प्रभु में जोड़ कर रखना असल में जीवन युक्ति है।

धिंग नाम के नाई को सिखी की निधि देते समय संगत की सेवा करने, गुरबाणी का कीर्तन सुनने तथा उषाकाल में परमेश्वर के नाम में ध्यान जोड़ने की जीवन युक्ति बताई। जीवन के खाली समय में भी गुरू उपदेश को मन में दृढ़ करने का उपदेश दिया।

पारो जुल्का जो बाद में गुरू अमरदास जी का भी बहुत निकटवर्ती सिख रहा, को आत्मिक उपदेश देते समय समझाया कि सच्चा भक्त माया में इस तरह निर्लिप्त रहता है जिस प्रकार पानी में कमल या मुरगाबी निर्लिप्त रहती है।

इसी प्रकार बटाले के **खानू, माहीआ तथा गोबिंद** को समझाया कि सच्चे भक्तों के लिए भक्ति का असली स्वरूप क्या है। सच्चा भक्त तो वही हो सकता है जो अपने इष्ट परमेश्वर के संग सदा एकमेव हो कर रहे।

दीपा, नारायण दास तथा बूलां नाम के सिख गुरू अंगद देव जी से माया की अग्नि के दु:खों से वचने का उपाय पूछने आये। सतगुरू साहिबान ने इस संसार के सब पदार्थों को क्षण भुंगर समझने तथा एकमात्र सच्चे ईश्वरीय प्यार के साधन को ही सभी दु:खों का सही तथा अचूक दारू बताया।

भाई माहणे को गुरू घर में सेवा करते हुए अहंकार हो गया था। उसको समदृष्टि अपनाने तथा नम्रता में रह कर सेवा करने का उपदेश दिया। गुरूद्वारों में सेवा कर रहे सेवादारों तथा प्रबंधकों को गुरू जी के इस उपदेश को विशेष कर हृदय में बसाने की आवश्यकता है। सेवा तब ही सेवा कही जा सकती है यदि निष्काम होकर, अहं को त्याग कर की जाये, सेवादार को कभी भी गुस्से में नहीं बोलना चाहिए बल्कि उसकी बोली मिठास तथा नम्रता वाली होनी चाहिए।

(11) गुरू अमरदास जी को गुरू गद्दी देना

गुरू अंगद देव जी की सुपुत्री बीबी अमरो जी का विवाह गुरू अंगद देव जी के गद्दी पर बैठने से केवल कुछ समय पहले (गुरू) अमरदास जी के भतीजे के साथ हुआ था। बीबी अमरो जी भी गुरू नानक देव जी की बाणी से बहुत प्रेम करते थे और नित्यप्रति के जीवन में बाणी पढ़ना उनके रहन-सहन का एक अंग था।

एक बार, जीवन में पहली बार गुरू नानक देव जी की बाणी सुन कर आप का गुरू घर से प्रेम हो गया और आप 62 वर्ष की आयु में गुरू अंगद देव जी की शरण में आ गये और आप ने सिखी धारण कर ली। आपने न केवल गुरू घर के सभी सिद्धांतों को अच्छी तरह समझ कर माना और जीवन में

उतारा, बल्कि 62 वर्ष की आयु से 73 वर्ष की वृद्धावस्था में गुरू घर की वह सेवा की, परमेश्वर को ऐसा सिमरन किया तथा गुरू के साथ ऐसा गहरा प्यार डाला कि गुरू गद्दी की महान् ज़िम्मेवारी संभालने वाले बन गये।

(गुरू) अमरदास जी को हर प्रकार से योग्य समझ कर गुरू अंगद देव जी ने उचित अवसर देख कर सारी संगत को सूचित कर दिया कि गुरू नानक देव जी द्वारा प्रदत्त सिखी प्रचार की ज़िम्मेवारी उनके पश्चात् (गुरू) अमरदास जी ही निभायेंगे। जनवरी, 1522 अथवा 1 माघ, संवत् 1609 को गुरू अंगद देव जी ने सारी संगत को एकत्र करके (गुरू) अमरदास जी को गुरू नानक देव जी की गद्दी(अर्थात् धर्म प्रचार की ज़िम्मेवारी) सौंप दी। गुरबाणी का संपूर्ण संग्रह भी गुरू अमरदास जी के हवाले कर दिया। भाई बुड्ढा जी तथा भाई पारो जी आदि सभी मुख्यी सिख इस समय मौजूद थे।

गुरू अमरदास जी को गुरू नानक देव जी की गुरू गद्दी की पूरी ज़िम्मेवारी देने के कुछ दिन पश्चात् 29 मार्च, सन् 1552 में साहिब सतगुरू अंगद देव जी ज्योति में विलीन हो गये।

(12) गुरू अंगद देव जी की बाणी

अब हम गुरू अंगद देव जी की बाणी में आये गुरमत सिद्धांतों का वर्णन करते हैं :–

(1) सफल जीव रूपी बनजारे

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि जीवन् इस जगत की मंडी में मानो वाणिज्य–व्यापार करने आता है। जिन जीवों को अपनी नेक कमाई के फलस्वरूप पूर्ण परमेश्वर मिल जाता है, वही जीव पूरे कामयाब शाह होते हैं। वे आठों पहर दुनियां से बेपरवाह रहते हैं और सदा एक मात्र परमेश्वर के प्यार में रंगे रहते हैं। ऐसे जीवन्, कोई-कोई ही हुआ करते हैं जो गहर–गंभीर रूप में परमेश्वर में लीन होते हैं। गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि पूरे बोल वाला, पूर्ण गुरू, पूरे सौभाग्य से, जिस जीव को भी पूर्ण बना देता है, उस जीव का आत्मिक भार, कभी कम नहीं होता और वह सदा ही ईश्वरीय प्यार में रमा रहता है। यथा :

"सेई पूरे साह, जिनी पुरा पाइआ ॥
अठी वेपरवाह, रहनि इकतै रंगि ॥
दरसनि रूपि अथाह, विरले पाईआहि ॥
करमि पूरै, पूरा गुरू, पूरा जा का बोलु ॥
नानक पूरा जे करै घटै नाही तोलु ॥ "

(माझ की वार, महला १)

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि जीव का शरीर जो (जो सृष्टि का नवम् खण्ड है) हर समय (आठों पहर) सृष्टि के पदार्थों (सृष्टि के आठ खंडों के पदार्थों) की प्राप्ति में ही लगा रहता है। इस मानव शरीर में ही परमेश्वर के नाम या ईश्वरीय प्यार रूपी नौ-निधियों का ठिकाना है, पर भाग्यवान् कुछ जीव ही गुरू धारण कर के इस मानव शरीर में उस परमेश्वर को ढूँढते हैं जो गुणों के कारण महान् गहर-गंभीर हैं।

सुबह के समय चौथे पहर (ऊषाकाल) में ऊंची सुरति वाले जीवों के मन में ईश्वरीय प्यार के लिए चाव पैदा होता है। ऐसे ईश्वरीय चाव वाले जीवों की मित्रता भक्त रूपी समुद्रों से होती है और उनके मन में तथा मुँह पर सदा कायम रहने वाले परमेश्वर का नाम ही होता है। ईश्वरीय भक्तों की संगत में ईश्वर के नाम का अमृत बांटा जाता है, पर यह कृपा परमेश्वर की कृपा द्वारा ही प्राप्त होती है। सतसंग

द्वारा शरीर रूपी सोने को सिमरन की कमाई से कस लिया जाता है और इस प्रकार शरीर पर प्रभु भक्ति का सुंदर रंग चढ़ जाता है। जब परमेश्वर रूपी सराफ की कृपा हो जाये, तो फिर शरीर को विकारों की तपश में जलने नहीं दिया जाता।

ऊषाकाल के चौथे पहर को ईश्वरीय प्यार तथा नाम सिमरन में व्यतीत करने के साथ दिन के बाकी सातों पहर भी अच्छा आचरण बनाने के लिए करनी वाले विद्वानों की संगत में बिताने चाहिएं, क्योंकि उनकी संगत में ही पाप तथा पुण्य कर्मों के बारे में विचार की जाती है और झूठ की रास पूंजी घटती है। इस सतसंग के प्रभाव द्वारा ही खोटे गुण शरीर में से बाहर फैंक दिये जाते हैं और खरे ईश्वरीय गुणों को उत्साहित किया जाता है। सतसंग में ही इस बात का ज्ञान होता है कि दु:ख या सुख तो मालिक परमेश्वर की रज़ा में ही मिलते हैं, इसलिए दु:खों सुखों के बारे में गिला करना निरर्थक है, क्योंकि ऐसा करना तो ईश्वरीय रज़ा के विपरीत बात है। यथा :-

"अठी पहरी अठ खंड, नावा खंडु सरीर ॥
तिसु विचि नउ निधि नामु ऐक, भालहि गुणी गहीर ॥
करमवंती सालाहिआ, नानक करि गुरु पीर ॥
चउथै पहरि सवाह कै, सुरतिआ उपजै चाउ ॥
तिना दरीआवा सिउ दोसती, मनि मुखि सचा नाउ ॥
औथै अंमृतु वंडीऐ, करमी होइ पसाउ ॥
कंचन काइआ कसीऐ, वंनी चढ़ै चढ़ाउ ॥
जे होवै नदरि सराफ की, बहुड़ि ना पाई ताउ ॥
सती पहरी सतु भला, बहीऐ पड़िआ पासि ॥
ओथै पापु पुंनु बीचारीऐ, कूड़ै घटै रासि ॥
ओथै खोटे सटीअहि, खरे कीचहि साबासि ॥
बोलण फादलु नानका:, दु:खु सु:खु खसमै पासि ॥"

(माझ की वार, महला १)

परमेश्वर रूपी शाह के चलाए हुए व्यापारी इस संसार में जन्म लेते हैं और उनको परमेश्वर उनके द्वारा किए हुए कर्मों के अनुसार लिखे लेख को साथ देकर संसार में भेजता है। परमेश्वर के लिखे इस लेख के अनुसार ही जीवन पर परमेश्वर का हुकम चलता है और जीव उसी के अनुसार ही संसार में अपने लिए वस्तु संभाल लेता है।

जीव रूपी बंजारे यहां अपने मतलब की वस्तु कमा कर उस वस्तु को अपने पल्ले बांध लेते हैं। कुछ जीव रूपी बंजारे अपने श्वासों की रास पूंजी खर्च करके परमेश्वर के सिमरन का लाभ कमा कर साथ ले जाते हैं और कई जीव रूपी बज़ारे अपने श्वासों की अमूल्य रास पूंजी गंवा कर और हानि उठा कर इस संसार से चल बसते हैं।

नाम की निधि मांगने वालों ने नाम की निधि अधिक से अधिक मांगी है और विषय-विकारों के प्रीतवानों ने विषयों के रस की अधिक से अधिक कामना की है। दोनों में किसी ने कम चीज़ की मांग नहीं की, पर दोनों में से शाबाश किसने हासिल की और प्रभु की कृपा दृष्टि किस पर हुई ? उन जीव रूपी

व्यापारियों पर ही प्रभु की कृपा दृष्टि होती है जिन्होंने परमेश्वर के नाम सिमरन की कमाई करने में श्वासों की सारी की सारी रास पूंजी, अर्थात् सारा जीवन लगा दिया है। यथा :-

"साह चले वणजारिआ, लिखिआ देवै नालि ॥
लिखे उपरि हुकमु होइ, लईऐ वसतु समालि ॥
वसतु लई वणजारई, वखरु बधा पाइ ॥
केई लाहा लै चले, इकि चले मूलु गवाइ ॥
थोड़ा किनै न मंगिओ, किसु कहीऐ साबासि ॥
नदरि तिना कउ नानका, जि साबतु लाए रासि ॥"

(सारंग की वार महला ४)

जिन मनुष्यों को परमेश्वर की स्तुति की कृपा मिली है, वही सही अर्थों में धनवान् हैं। परमेश्वर ने जिन मनुष्यों को अपने नाम के खज़ाने की कुंजी दी है, उनको नाम रूपी खज़ाने के भंडार मिल जाते हैं।

जिन जीव-रूपी भंडारों में से ईश्वरीय गुण निकलते हैं या प्रकट होते हैं, वही जीव ही परमेश्वर की दरगाह में स्वीकार्य होते हैं। जिन मनुष्यों के पास परमेश्वर के नाम की राहदारी होती है, उन पर परमेश्वर की वास्तविक कृपा होती है। परमेश्वर की स्तुति ही सबसे बड़ा खज़ाना है और सिमरन करने वाले मनुष्य ही वास्तव में सफल, बनजारे हैं। यथा :

"सिफति जिना कउ बखसीऐ, सेई पोतेदार ॥
कुंजी जिन कू दितीआ, तिना मिले भंडार ॥
जह भंडारी हू गुण निकलहि, ते कीअहि परवाणु ॥
नदरि तिना कउ नानका, नामु जिना नीसाणु ॥" (सारंग की वार, महला ४)

गुरू अंगद देव जी के विचार के अनुसार मानव जीवन की सफलता संबंधी वास्तविक इज़्ज़त वही है जो परमेश्वर द्वारा मंज़ूर हो कर मिले। संसार में विचरण करते हुए मनुष्य दूसरों की आंखों में धूल डाल कर भी नेक के तौर पर मशहूर हो सकता है, परमेश्वर की दृष्टि से उसकी बुराई बच नहीं सकती और वहां वह प्रकट हो ही जाता है। परमेश्वर की कसौटी सौ फीसदी ठीक तथा संपूर्ण है और जो पुरुष उस ईश्वरीय कसौटी पर पूरा उतर कर स्वीकार्य होता है और इज़्ज़त हासिल करता है, उसकी इज़्ज़त ही असल इज़्ज़त है और इस इज़्ज़त को संसार की कोई शक्ति भी नुकसान नहीं पहुंचा सकती।

गुरू साहिब कहते हैं कि यह बात इस प्रकार की है कि जैसे सर्दी आग का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती, रात सूर्य का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती, अंधेरे की चंद्रमा के आगे कोई पेश नहीं जा सकती, जाति-पांत के भेदभाव हवा तथा पानी की निष्पक्षता तथा भ्रातृत्व का कुछ नहीं बिगाड़ सकते और जिस प्रकार धरती के पदार्थ अपने भार या पासार द्वारा धरती का कुछ नहीं बिगाड़ सकते(यह तो स्वयं ही धरती की पैदावार हैं) बिल्कुल इसी प्रकार प्रभु की कसौटी पर पूरी तरह उतर कर मिली आत्मिक सम्मान या स्वीकरण को दुनियां की कोई ताकत नाश नहीं कर सकती। इस कारण हमारे मानव जीवन का ध्येय प्रभु द्वारा प्रदत्त सच्ची इज़्ज़त की प्राप्ति ही होना चाहिए। यथा :

"अगी पाला कि करे, सूरज केही राति ॥
चंद अनेरा कि करे, पउण पाणी किआ जाति ॥

धरती चीजी कि करे, जिसु विचि सभु किछु होइ ॥

नानक ता पति जाणीऐ, जा पति रखै सोइ ॥" (माझ की वार, महला १)

गुरू अंगद देव जी के महान् विचारों के अनुसार वही मनुष्य एक सफल जीव-व्यापारी है, जो परमेश्वर की वास्तविकता (आत्मा) का संपूर्ण ज्ञान या रहस्य समझता हो। गुरू साहिब के अनुसार परमेश्वर की वास्तविकता को समझ लेने वाला मनुष्य वास्तव में माया से निर्लिप्त परमेश्वर का स्वरूप ही हो जाता है और ऐसी ऊंची आत्मिक अवस्था वाले पुरुष की महानता, गुरू अंगद देव जी अपने आप को दास कह कर प्रकट करते हैं।

देवी-देवताओं की पूजा से मोड़ कर परमेश्वर के असल स्वरूप को समझाने के लिए सतगुरू जी कहते हैं कि एक परमेश्वर ही सभी देवी-देवताओं की आत्मा है। देवताओं का क्या, देवताओं के इष्ट देवों का मूल तथा आसरा आधार भी परमेश्वर स्वयं ही है। ऐसे परमेश्वर की संपूर्ण जानकारी या ज्ञान ही मनुष्य के लिए अभिष्ट है। यथा :

"ऐक कृशनं सरब देवा, देव देवा त आतमा ॥

आतमा वासुदेवसि, जे को जाणे भेऊ ॥

नानुक ताका दासु है सोई निरंजन देहु ॥" (आसा की वार, महल १)

(2) सांसारिक पदार्थ नाशवान् हैं :

गुरू अंगद देव जी के उपदेशा अनुसार मानव जीवन केवल एक रात की भांति है, कुछ समय के लिए है। 12-13 घंटों का समय पूरा हो जाने पर प्रातः आ जाती है और रात समाप्त हो जाती है, इसी प्रकार चंद वर्षों या महीनों के पश्चात् मानव जीवन यात्रा की रात समाप्त हो जाती है। भाव यह कि मानव जीवन क्षण भंगुर या थोड़े समय के लिए ही है।

गुरदेव जी कहते हैं कि यदि मानव जीवन रूपी क्षणभंगुर रात की खातिर हमारे जीवन का एकमात्र ध्येय, धन-जायदाद एकत्र करना बन जाये, जबकि जीवन रूपी रात समाप्त होने पर (भाव मृत्यु आने पर) निश्चय ही यह धन-जायदाद यहीं पर ही रह जायेंगी और यह जीवन के साथ नहीं जा सकते, तो यह वास्तविक प्रकट होने पर पछतावा ही रह जायेगा। इसलिए चंद वर्षों के जीवन के लिए केवल मात्र धन जायदाद एकत्र करते जाने का ध्येय निश्चित कर लेना विवेकपूर्ण बात नहीं है। यथा :

"राति कारणि धनु संचीऐ, भलके चलणु होइ ॥

नानक नालि न चलई, फिरि पछुतावा होई ॥"

(सूही की वार, महला, ३ में से)

मानव जीवन क्षणभंगुर है, पर यह सच्चाई व्यवहार में बहुत कम मनुष्यों ने हृदय में धारण की है। इस सच्चाई को पहचानने वाले तथा इस से बेपरवाह दोनों प्रकार के मनुष्य संसार में पाये जाते हैं।

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि वह मनुष्य मायावादी धंधों के बहुत प्रसार नहीं करता जिसने मानव जीवन की क्षण भंगुरता या सामयिकता को समझ लिया है। इस हकीकत को समझने वाले पुरुष मायावादी प्रसार करें भी क्यों ? पर वह पुरुष जिनका निशाना केवल मात्र अपने सांसरिक काम संवारना तथा ठीक करना होता है, उसके मन में मानव जीवन की क्षण भंगुरता का विचार तक नहीं होता। वह मौत को बिल्कुल ही भूला बिसरा हुआ होता है। यथा :

"जिनी चलणु जाणिआ, से किउ करहि विथार ॥

चलण सार न जाणनी, काज संवारणहार ॥" (सूही की वार महला ३)

(3) परमेश्वर के सामने मनुष्य की हस्ती बड़ी तुच्छ है

परमेश्वर बहुत बेअंत है और अनंत शक्तियों का मालिक है। परमेश्वर के अटल कानून के अनुसार जीव ने अपने किये कर्मों के अनुसार अपने जीवन की दौड़-धूप में पड़े रहना है। रोज़ी मात्र की खातिर सारे जीवन में किसी न किसी प्रकार की भटकन में पड़ना ही होता है। ईश्वर का अटल कानून या रज़ा मनुष्य के नाक में नकेल की तरह है।

गुरु अंगद देव जी कहते हैं कि पिछले कमाये कर्मों के अनुसार जीव का स्वभाव तथा संस्कार पक जाते हैं तथा उसी के अनुसार जीवन की दौड़धूप में पड़ा रहता है। ईश्वर के अटल कानून या रज़ा के अधीन पिछले कमाये कर्मों के अनुसार जहां-जहां पर भी मनुष्य का दाना पानी होता है, उसने अपनी दौड़धूप में वहां-वहां जा कर खाना होता है। असली बात तो यह है कि ईश्वर के अटल कानून अथवा रज़ा की नकेल मनुष्य की नाक में पड़ी हुई है तथा इस रज़ा की नकेल की रस्सी प्रभु ने अपने हाथ में ले रखी है।

मनुष्य अपनी सारी दौड़ धूप में ईश्वर की रज़ा या उसके अटल कानून के अधीन है तथा इस रज़ा का मालिक वाहिगुरु स्वयं ही है। मनुष्य अपने आप पर जितना चाहे गर्व करता रहे, पर परमेश्वर की हस्ती के सामने उसकी कोई औकात नहीं है। यथा :

"नकि नथ खसम हथ, किरतु धके दे ॥

जहा दाणे तहां खाणे, नानका सचु हे ॥" (सोरठि की वार महला ४)

(4) रंगा रंग प्रभु की सृष्टि के मायावादी धंधों में मन को फंसा लेना उचित नहीं

गुरु अंगद देव जी कहते हैं कि परमेश्वर स्वयं ही सभी जीवों को पैदा करता है और स्वयं ही इस रंग-बिरंगी सृष्टि की संभाल करता है। गुरु साहिब मनुष्य को समझाते हुए कहते हैं कि जब सभी जीवों का साहिब एक मात्र परमेश्वर स्वयं है तो हम बुरा किसको और क्यों कहें ?

परमेश्वर सभी जीवों का साहिब है और सभी जीवों को अपनी रज़ा के अनुसार मायावादी धंधों में लगा कर उनकी देखभाल कर रहा है। संसार का कोई जीव इन मायावादी धंधों से बच नहीं सका है। किसी को थोड़े मायावादी धंधे लगाये हैं और किसी को ज्यादा। इन धंधों में फंस कर व्यक्ति अपनी होश गंवा बैठते हैं। वे मायावादी प्रसार करते जा रहे हैं कि सभी जीव संसार में खाली ही आते हैं और अपनी एकत्र की हुई धन-जायदाद को यहीं पर छोड़ कर खाली हाथ ही संसार में से कूच कर जाते हैं। आगे जाकर माया में फंसे हुए जीवों को क्या करना होगा, इस संबंध में परमेश्वर का अटल हुकम जाना नहीं जा सकता। यथा :

"आपि उपाए नानका, आपे रखे वेक ॥

मंदा किसनो आखीऐ, जा सभना साहिबु ऐकु ॥

सभना साहिबु ऐकु है, वेखै धंधै लाइ ॥

किसै थोड़ा किसै अगला, खाली कोई नाहि ॥

आवहि नंगे जाहि नंगे, विचे करहि विथार ॥

नानक हुकमु न जीणीऐ, अगै काई कार ॥" (सारंग की वार, महला ४)

गुरु अंगद देव जी मनुष्य को बड़ी ज़ोरदार प्रेरणा करते हुए कहते हैं कि हे मनुष्य, दुनियां के मायावादी गौरव से प्रीति डालने और इनके पीछे भागने का क्या लाभ ? यदि तू ऊँची आत्मिक अवस्था

को प्राप्त करना चाहता है तो दुनिया के इस मायावादी अभिमान को गुरू ज्ञान की अग्नि में जला दे। दुनिया के इस जलनशील मायावादी अभिमान ने तो तुझे ईश्वर का नाम और प्यार भुला दिया है और मरने के पश्चात् मायावादी प्राप्तियों में से एक प्राप्ति भी तेरे संग नहीं जाने की।

"नानक दुनीआ कीआ वडिआईआ, अगी सेती जालि ॥
ऐनी जलीईं नामु विसारिआ, इक न चली नालि ॥ "

(मलार की वार, महला १ में से)

(5) परमेश्वर से टूटा व्यक्ति अज्ञानी और अंधा है

गुरू अंगद देव जी उस मनुष्य को अंधा नहीं कहते जो परमेश्वर की रज़ा के अनुसार नेत्रहीन हो गया है। आप के अनुसार वास्तव में अंधा वह पुरुष है जो परमेश्वर की रज़ा अथवा उसके अटल कानून अथवा हुकम को नहीं समझता है। मानव जीवन में झूठ के पर्दे को तोड़ कर तथा हटा कर ही परमेश्वर के दीदार हो सकते हैं और झूठ का पर्दा ईश्वर की रज़ा में राज़ी रह कर चलने से ही टूट सकता है। ईश्वरीय रज़ा से ज्ञान विहीन पुरुष जीवन में अंधे की भांति ठोकरें खाता है। यथा :

"सो किउ अंधा आखीऐ, जि हुकमहु अंधा होइ ॥
नानक हुकमु न बुझई, अंधा कहीऐ सोइ ॥ " (रामकली की वार, महला ३)

गुरदेव बहुत स्पष्ट शब्दों में कहते हैं कि वास्तव में वे लोक अंधे नहीं कहलवा सकते, जिनके चेहरे पर आंखें नहीं हैं। अंधे तो वे अंधे हैं जो संसार तथा माया की वास्तविकता को जीवन में देख पहचान नहीं सके और जिसके कारण वे सारा जीवन ईश्वर को भूले रहते हैं।

ऐसे मायाजाल में फंसे, ईश्वर को भूले हुए अज्ञानियों द्वारा बताई राह के अनुसार तो वह मनुष्य ही चल सकता है जो स्वयं भी अंधा हो। ज्ञानवान, नज़रवान पुरुष ऐसे ईश्वर को भूले हुए अज्ञानी अंधों की बातों में आकर ठोकरें नहीं खा सकता। यथा :

"अंधे कै राहि दसीऐ, अंधा होइ सु जाइ ॥
होइ सुजाखा नानका, सो किउ उझड़ि पाइ ॥
अंधे ऐहि न आखीअनि, जिन मुखि लोइण नाहि ॥
अंधे सेई नानका, खसमहु घुथे जाहि ॥ " (रामकाली की वार, महला ३)

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि ईश्वरीय गुणों के रत्नों की गुत्थी रत्नों की परख वाले गुरू ने आ खोली है। ईश्वरीय गुण रूपी रत्नों को बेचने वाले सतगुरू तथा ईश्वरीय गुण रूपी रत्नों को खरीदने वाले सच्चे जिज्ञासुओं दोनों के हृदय में ईश्वरीय गुण रूपी रत्ना की पूंजी समाई हुई है। जिन मनुष्यों केपास ईश्वरीय गुण रूपी रत्नों को परख कर सकने का गुण है वही मनुष्य ईश्वरीय गुणों के माणिकों का व्यापार करते हैं, पर जो मनुष्य ईश्वरीय गुणों के रत्नों की कदर नहीं जानते हैं, वे मनुष्य संसार में अंधों की तरह भटकते रहते हैं। यथा :

"रतना केरी गुथली, रतनी खोली आइ ॥
वखर तै वणजारिआ, दुहां रही समाइ ॥
जिनि गुण पलै नानका, माणक वणजहि सेइ ॥
रतना सार न जाणनी अंधे वतहि लोइ ॥ (रामकली की वार, महला ३ में से)

गुरू अंगद साहिब जी कहते हैं कि मालिक वाहिगुरू ने स्वयं ही अज्ञानी–अंधा बनाया है। उसे यदि वाहिगुरू स्वयं चाहे तो ज्ञान वाला बना दे। दूसरा कोई व्यक्ति अपने बाहरी यत्नों द्वारा उसको ज्ञान वाला नहीं बना सकता और उसके मन को लगी माया की पर्त नहीं उतर सकती। माया के आंगन में अज्ञानी जीव को जैसी मायावादी सूझ है, वह वैसा ही मायावादी व्यवहार करता जाता है। वह सैंकड़ों मनुष्यों के समझाने पर भी ज्ञान की बात को नहीं समझता है।

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि जिस हृदय में ईश्वरीय प्यार रूपी वस्तु नहीं दिखाई देती उस हाथ को अहंकारी समझो, चाहे वह पुरुष लाख धार्मिक आडंबर करता नज़र आये। वास्तविकता यह है कि ग्राहक वह चीज़ खरीदे भी तो क्यों खरीदे, जिस चीज़ की ग्राहक को पहचान ही नहीं है। ईश्वरीय प्यार के बिना मनुष्य अहं में फंसा रहता है और परमेश्वर के सिमरन तथा यश-गायन की कीमत नहीं पा सकता। यथा :

"साहिब अंधा जो कीआ, करे सुजाखा होइ ॥
जेहा जाणै तेहो वरतै, जे सउ आखै कोइ ॥
जिथै सु वसतु न जापई, आपे वरतउ जाणि ॥
नानक गाहकु किउ लए, सकै न वसतु पछाणि ॥"

(रामकली की वार, महला ३ में से)

(6) आत्मिक रहनुमाई (नेतृत्व) देने वालों के बारे में :

श्री गुरू अंगद देव जी के अनुसार यदि संसार में सैंकड़ों चंद्रमा का उदय हो जाये और हज़ारों सूर्योदय भी हो जायें तो इन चंद्रमाओं तथा सूर्यों का प्रकाश होते हुए भी सतगुरू साहिबान की रहनुमाई के बिना सांसारिक जीवों के आत्मिक रास्ते में सही अर्थों में अज्ञानता का घोर अंधकार ही होता है।

आत्मिक रहनुमाई के लिए सतगुरू की बेहद आवश्यकता है। यथा :

"जे सउ चंदा उगवहि, सूरज चड़हि हजार ॥
ऐते चानण होंदिआ, गुर बिनु घोर अंधार ॥" (आसा की वार, महला १ में से)

सतगुरू अंगद देव जी ने सतगुरू की आवश्यकता संबंधी बहुत खूबसूरत मिसाल पेश की है। आप जी के अनुसार सतगुरू के बिना मनुष्य के मन का किवाड़ और कोई नहीं खोल सकता। मन के दरवाज़े पर लगी ताले की चाबी सतगुरू के बिना और किसी के हाथ में नहीं है। मानव का मन एक प्रकार की कोठड़ी सी ही है और मानव का शरीर एक प्रकार से इस कोठड़ी की छत है और इस मानव की मन रूपी कोठड़ी के दरवाज़े पर माया के धूल रूपी ताले को सतगुरू की ज्ञान-रूपी कुंजी से ही खोला जा सकता है। माया के दुष्प्रभावों से मुक्ति केवल मात्र सतगुरू के ज्ञान द्वारा ही प्राप्त हो सकती है। यथा:

"गुर कुंजी, पाहू निवलु, मनु कोठा, तनु छति ॥
नानक, गुर बिनु मन का ताकु न उघड़ै, अवर न कुंजी हथि। ।"

(सारंग की वार, महला ४)

गुरू अंगद देव जी के अनुसार आत्मिक नेतृत्व देने वाले पुरुष एक वैद्य या डाक्टर मनुष्य के शारीरिक रोगों का इलाज करते हैं जबकि सतगुरू, संत या धर्म प्रचारक का काम मनुष्य के आत्मिक रोगों का इलाज करना होता है।

अच्छा वैद्य या डाक्टर वही हो सकता है, जिसको रोग की पहचान या जानकारी हो, रोग को शरीर में से बाहर निकालने के लिए अच्छी दवा उसके पास हो और दवा भी ऐसी हो कि उससे शरीर में सारे रोग खत्म हो जायें और मनुष्य शारीरिक तौर पर सुखी हो जायें। उस वैद्य के ही इलाज का असर रोगीपर पड़ सकता है जो स्वयं खुद रोगों से मुक्त हो। रोगग्रस्त वैद्य का तो रोगी के मन पर बहुत बुरा मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ सकता है।

बिल्कुल ऐसे ही अच्छा धार्मिक नेता वही हो सकता है जो मनुष्यों के आत्मिक रोग को अच्छी तरह पहचानता हो। मनुष्य के समस्त आत्मिक रोगों का समूल नाश करने के लिए उसके पास सही इलाज हो। इलाज भी ऐसा कि जिससे मनुष्य के सारे आत्मिक रोग नष्ट हो जायें और मनुष्य सुखों से भरपूर हो जाये। अच्छा धार्मिक नेता तो वही हो सकता है जिसने पहले अपना आपा पूरी तरह मिटा लिया हो। यथा :

वैदा वैदु सुवैदु तूं, पहिला रोगु पछाणु ॥
अैसा दारू लोड़ि लहु, जितु वंञै रोगा घाणि ॥
जितु दारु रोग उठिअहि, तनि सुखु वसै आइ ॥
रोगु गवाइहि आपणा, त नानक वैदु सदाइ ॥" (मलार की वार, महला २)

गुरू अंगद देव जी के विचारा अनुसार यदि कोई मनुष्य स्वयं तो ब्रह्म ज्ञान से विहीन हो और चल पड़े ईश्वरीय गुणों रूपी रत्नों की परख करने तो उसको बुरी तरह ज़लालत का मुंह देखना पड़ता है। ब्रह्म ज्ञान-विहीन अपने आप बना हुआ "सत्‌गुरू" किसी चेले का तो भला बिल्कुल नहीं कर सकता, पर अपनी अज्ञानता की पोल आगे पीछे अचानक खुलवा बैठता है। इस प्रकार अपना आप नशर करवा कर ज़लील होता है। यथा :

"नानक अंधा होइ कै, रतना परखण जाइ ॥
रतना सार न जाणई, आवै आपु लखाइ ॥"

(रामकली की वार महला ३)

गुरू अंगद देव जी ने धार्मिक नेताओं के सम्मुख बड़ी सुंदर जीवन युक्ति रखी है। उनका आचरणिक स्तर कैसा होना चाहिए, इस बारे में बहुत ऊंचे स्तर की रहनुमाई दी है। सुंदर जीवन युक्ति वाले धार्मिक नेताओं के साथ अकारण विरोध करने वाले भी संसार में प्रकट होते ही रहते हैं, पर वे अपने अकारण विरोध और ईर्ष्या के कारण अपनी की गई कारगुज़ारी का बुरा फल ही भोगते हैं।

सतगुरू साहिबान के अनुसार उस पुरुष को ही सच्चा परीक्षक समझना चाहिए जो अपने आप की (अपने अवगुणों की) जांच-पड़ताल करता रहता हो। वही पुरुष की योग्य वैद्य (धार्मिक नेता) कहलवा सकता है जो मनुष्य के आत्मिक रोग तथा उसके सही इलाज दोनों को ठीक तरह से समझता हो। जीवन रूपी फसल में दूसरों के साथ फज़ूल झगड़े न कर हो और अपने आप को इस संसार में मेहमान की तरह थोड़ा समय टिकने वाला समझता हो।

अपने मूल परमेश्वर को अच्छी तरह जानते हुए ही संसार में सभी काम करें और सच्चे सतसंगियों से मित्रता करे।

जो पुरुष जीवन में प्रभु पर आश्रित होकर नहीं चलता तथा हमेशा स्थिर ईश्वर में लीन रहता है, केवल ऐसा पुरुष ही दूसरों की आत्मिक कल्याण के लिए स्वीकार्य बिचौला बन सकता है।

यदि कोई गुणविहीन थोथा मनुष्य आकाश जैसी ऊंची आत्मिक अवस्था वाले पुरुष पर अपनी ईर्ष्या का तीर चलाये तो अगम्य ऊंची आत्मिक अवस्था वाले पुरुष को ईर्ष्या तथा विरोध का यह तीर कैसे हानि पहुंचा सकता है ? बल्कि सत्य तो यह है कि ईर्ष्या का ऐसा तीर उल्टे ईर्ष्यालु तीर चलाने वाले को ही घायल कर देता है अर्थात् मूर्ख ईर्ष्यालु, भले पुरुष के साथ की गई ईर्ष्या से स्वयं ही जलता रहता है और अपना आत्मिक जीवन बर्बाद कर लेता है। यथा :

> ***"नानक परखे आप कउ, तां पारखु जाणु ॥***
> ***रोग दारू दोवै बुझै, तां वैदु सुजाणु ॥***
> ***वाट न करई मामला, जाणै मिहमाणु ॥***
> ***मूलु जाणि गलां करे, हाणि लाइ हाणु ॥***
> ***लबि न चलई, सचि रहै, सो विसटु परवाणु ॥***
> ***सर संधे आगास कउ, किउ पहुचै बाणु ॥***
> ***अगै उह अगंम है, वाहेदडु जाणु ॥"***

(माझ की वार, महला १)

सतगुरू अंगद देव जी ने अपनी बाणी में बड़ी स्पष्टता से समझाया है कि गुरू बनना बड़ी ज़िम्मेवारी का काम है। परमेश्वर की पूर्ण कृपा और ईश्वरीय गुणों के बिना इस ज़िम्मेवारी को उठाने का हठ करना एक प्रकार की बड़ी मूर्खता ही है। फिर ईश्वरीय कृपा को प्राप्त कर चुके सतगुरू के संग शत्रुता करना न केवल बड़ी मूर्खता है बल्कि अपना सर्वनाश करवाने के समान है।

इस तथ्य को समझाने के लिए गुरू अंगद देव जी ने बहुत सुंदर मिसाल दी है। आप कहते हैं कि यदि कोई मनुष्य छछूंदर का झाड़ा करने वाला हो और वह सांपों को हाथ डालने का साहस कर बैठे, तो मानो अपने आप को आग लगा रहा है। हर व्यक्ति, मनुष्य जाति को विषय विकारों से रोक सकने तथा उनकी आत्मिक जीवन में रहनुमाई कर सकने की हांकने तथा गुरू बनने के चक्कर में है।

यह अति दर्जे की मूर्खता है। परमेश्वर का अटल कानून ही ऐसा है कि इस प्रकार की अति दर्जे की मूर्खता करने वाला व्यक्ति ईश्वर के दर पर धक्के ही खाता है। परमेश्वर का सच्चा न्याय ही ऐसा है कि जो मनमुख पुरुष गुरमुख आत्मा के संग अड़ता है या शत्रुता करता है, वह विकारों के सागर में डूब कर अपना आत्मिक जीवन तबाह कर लेता है। गुरमुख तथा मनमुख दोनों ओर का पति परमेश्वर स्वयं ही हैं और स्वयं ही निर्णय करके देख रहा है। हमें तो ऐसे समझना चाहिए की सब कुछ उसकी रज़ा में हो रहा है। यथा :

> ***"मंत्री होइ अठूहिआ, नागी लगै जाइ ॥***
> ***आपण हथी आपणै, दे कूचा आपे लाइ ॥***
> ***हुकमु पइआ धुरि खसम का, अती हू धका खाइ ॥***
> ***गुरमुख सिउ मनमुख अड़ै, डुबै हकि निआइ ॥***
> ***दुहा सिरिआ आपे खसमु, वेखै करि विउपाइ ॥***
> ***नानक एवै जाणीऐ, सभ किछु तिसै रजाइ ॥"***

(माझ की वार, महला १)

गुरू अंगद देव जी ने यह हकीकत भी अच्छी तरह स्पष्ट कर दी है कि इस संसार में अलग-अलग सामाजिक भ्रातृत्व में और अलग-अलग समय में कई बार बिल्कुल उल्टी रीति प्रचलित हो जाती है। इस

उल्टी रीति के प्रभाव के कारण जीवन और ब्रह्म ज्ञान विहीन व्यक्ति विद्वान तथा करनी वाले धार्मिक नेताओं के तौर पर प्रसिद्धि प्राप्त कर लेते हैं। ऐसी विपरीत रीति का प्रचलित हो जाना ही वास्तव में कलयुग है। किसी समय विशेष का नाम कलयुग नहीं, जब और जहां पर भी यह रीति प्रचलित हो जायें, वहीं पर कलियुग का प्रकोप समझ लेना चाहिए।

उल्टी रीति या उल्ट सोचने के प्रभाव के कारण सही अर्थों में कंगाल मनुष्य का नाम पातशाह रख दिया जाता है और मूर्ख और अज्ञानी पुरुष की संज्ञा विद्वान प्रचलित हो जाती है। ज्ञान विहीन अंधा मनुष्य पारखु कहलवाता है। बस, इसी प्रकार की उल्ट-पुल्ट बातें प्रचलित हो जाती हैं। शरारतें तथा शैतानियों भरे पुरुष समाज के चौधरी या नेता (लीडर) की प्रसिद्धि प्राप्त कर लेते हैं और झूठे फरेब से स्त्रियों भरे समाज में प्रधानगी करने लग जाते हैं। सतगुरू के द्वारा ही मनुष्य को इस विपरीत रीति का ज्ञान प्राप्त होता है और असल में क्या बुरा है और क्या अच्छा है, इस बारे में उसको पता चलता है। समाज में जहां और जहां यह विपरीत रीति तथा विपरीत सोचने के ढंग ज़ोर पकड़े जायें, वहीं पर कलयुग का कोप समझो। यथा :

"नाउ फकीरै पातिसाहु, मूरख पंडित नाउ ॥
अंधे का नाउ पारखू, एवै करै गुआउ ॥
इलति का नाउ चौधरी, कूड़ी पूरे थाउ ॥
नानक गुरमुखि जाणीअ, कलि का एहु निआउ ॥"

(मलार की वार, महला १)

(7) ईश्वरीय प्यार के बारे में सतगुरू साहिबान के विचार

गुरू अंगद देव जी की विचारधारा के अनुसार मनुष्य के जीवन का एकमात्र ध्येय या मकसद परमेश्वर के साथ गहरा प्यार डाल कर उसके संग पूरी पहचान पैदा करना है। मनुष्य जब तक परमेश्वर के साथ गहरा प्यार नहीं डालता, जान–पहचान नहीं पैदा करता, उसका मानव जन्म निष्फल ही समझना चाहिए। सतगुरू के उपदेशों के फलस्वरूप अनंत मनुष्य इस विषय विकारों भरे संसार से पार हो जाते हैं, क्योंकि सतगुरू साहिबान की कृपा द्वारा उनके दिल में ईश्वरीय प्यार पैदा हो जाता है। सृष्टि का मूल कारण परमेश्वर, पूर्ण तौर पर समर्थ है। सृष्टि का बनाना केवल सृजनहार परमेश्वर के बस में है। जिस परमेश्वर ने सारे संसार में अपनी सत्ता टिका रखी है, हे मनुष्य ! तूं उसी का ध्यान कर। यथा :

"निहफलं तसि जनमसि, जावतु ब्रहम न बिंदते ॥
सागरं संसारसि, गुर परसादी तरहि के ॥
करण कारण समरथु है, कहु नानक बीचारि ॥
कारण करते वसि है, जिनि कल रखी धारि ॥"

(माझ की वार, महला २)

गुरू अंगद देव जी ने समझाया कि संसार में जिन मनुष्यों ने ईश्वर का प्यार पाकर उसको अपने हृदयमें बसा कर ईश्वर का मिलाप प्राप्त किया है, वे सदा बसंत ऋतु की भांति खिले रहते हैं, जबकि ईश्वरीय प्यार तथा ईश्वरीय मिलाप से टूटे पुरुष दिन रात माया की तृष्णा तथा विकारों की अग्नि में ही धधकते रहते हैं। गुरू साहिब कहते हैं कि यह बात इसी प्रकार है जिस प्रकार बसंत ऋतु उन स्त्रियों के मन में ही खुशियां तथा खेड़ा पैदा करती है जिनके पति उनके घर में बसते हों। पर जिन स्त्रियों के पति

उनको छोड़ कर दूसरी दिशाओं या प्रदेशों, पुरियों में गये हों, वे बसंत ऋतु में भी दिन-रात पति के बिछोड़े की अग्नि में धधकती रहती हैं। यथा :

"नानक तिना बसंतु है, जिन् घरि वसिआ कंतु ॥

जिन् के कंत दिसा पुरी, से अहिनिस फिरहि जलंत ॥"

(सूही का वार, महला ३ में से)

ईश्वरीय प्यार के वास्तविक रूप को समझाने के लिए गुरूदेव कहते हैं कि यदि कोई प्रेमी अपने इष्ट परमेश्वर को छोड़कर किसी और में भी प्रीति जोड़ लेता है, तो यह प्रीति, सच्ची प्रीति कैसे कहलवा सकती है ? सच्चा प्रेमी भक्त तो वही कहा जा सकता है जो सदा अपने इष्ट परमेश्वर के प्रेम में लीन हो कर परमेश्वर के साथ एकमेव हो कर रहे।

जो मनुष्य परमेश्वर की ओर से हुए सुखदायी (जो मनुष्य को सुखदायी लगें) कामों को तो खुशी से अच्छा करके मानता है, पर परमेश्वर की ओर से वरताये गये भाणे को अच्छा या बुरा करके मानता है, वह वाहिगुरू का सच्चा प्रेमी नहीं कहलवा सकता, क्योंकि वह ईश्वर के संग सच्चा प्यार करने की जगह पर उसके साथ दु:खों-सुखों के अच्छे बुरे लेखे गिन-गिन कर प्यार की साझ डालने के गलत रास्ते पर पड़ा हुआ है। यथा :

"ऐह किनेही आसकी, दूजै, लगै जाइ ॥

नानक आसकु कांढीऐ, सद ही रहै समाइ ॥

चंगै चंगा करि मंने, मंदै मंदा होइ ॥

आसक ऐहु न आखीऐ, जि लेखे वरतै सोइ ॥" (आसा दी वार, महला १ में से)

ईश्वर के सच्चे प्रेमी या सच्चे भक्त का यह व्यवहार नहीं हो सकता कि यदि ईश्वर की ओर से अच्छी दात मिल गयी तो वह ईश्वर के आगे झुक-झुक कर सलाम करता रहे, पर यदि कहीं उसको ईश्वर की ओर से अपनी उम्मींद के विपरीत दुखदायी वस्तु जाय मिल तो ईश्वर के संग खीझ कर आपत्ति करना आरंभ कर दे। ऐसा प्यार सच्चा ईश्वरीय प्यार नहीं कहलवा सकता।

यदि जिज्ञासु अपने मालिक प्रभु के आगे कभी (सुख के समय) तो सिर झुकाता है और कभी (दुख के समय) उसकी रज़ा या आदेश में राजी रहने की जगह पर इन्कार करता है, वह वास्तव में आत्मिक मार्ग पर पड़ने से पूर्व, आरंभ से ही सच्चे रास्ते से भटक गया समझना चाहिए। सतगुरू साहिबान के अनुसार उस की दोनों, बातें अर्थात् सलाम और जवाब झूठी तथा आधारहीन हैं और इन में से कोई भी मालिक के दर पर स्वीकार्य नहीं हो सकती। यथा :

"सलामु जबाबु दोवै करे, मुंढहु घुथा जाइ ॥

नानक दोवै कूड़ीआ, थाइ न काई पाइ ॥" [आसा की वार, महला १ में से]

ईश्वर का सच्चा प्रेमी अपने मन का अहंकार तथा झगड़े वाली वृत्ति का त्याग करके ईश्वर के रास्ते पर चलते हुए परमेश्वर की सेवा करता है। गुरू अंगद देव जी ने यह आत्मिक उपदेश बहुत ही सुंदर ढंग से एक सांसरिक मिसाल द्वारा पेश किया है।

यद्यपि कोई सेवक मालिक की नौकरी भी करे तथा नौकरी के साथ-साथ अहंकार भरी बातें तथा वाद विवाद भी करता जाये और ऐसी अहंकार भरी बाते मालिक के सामने बार-बार करे तो वह मालिक

की खुशी नहीं हासिल कर सकता। परंतु यदि सेवक अपने अहं या "मैं" की भावना मिटा कर मालिक की सेवा करे, तो ही उसको मालिक के दर से कुछ इज्ज़त सम्मान मिलता है। बिल्कुल इसी प्रकार यदि कोई जिज्ञासु परमेश्वर की सेवा भक्ति करने के साथ-साथ अहंकार का त्याग न करे, वाद-विवादों में पड़ा रहे और चतुर होशियार बनने के लिए गप्पें लगाये, तो ऐसा जिज्ञासु मालिक वाहिगुरू के दर पर स्वीकार्य नहीं होता और न ही प्रभु के दर पर उस को इज़्ज़त ही मिलती है। गुरदेव जी कहते हैं किसेवक जिज्ञासु जिस मालिक प्रभु की सेवा में लगा हुआ है, यदि वह उस प्रभु के साथ एकमेव हो कर उसको मिल जाता है, तो ही उस सेवक को मालिक प्रभु की सेवा में लगा हुआ समझा जा सकता है। यथा :

"चाकर लगै चाकरी, नाले गारबु वादु ॥

गला करे घणेरीआ, खसम न पाए सादु ॥

आप गवाइ सेवा करे, ता किछु पाइ मानु ॥

नानक जिसनो लगा तिसु मिलै, लगा सो परवानु ॥"

[आसा की वार, महला १ में से]

परमेश्वर का सच्चा प्रेमी या सेवक वही कहा जा सकता है जो अपने मालिक परमेश्वर के साथ प्यार डाल कर उस के संग एकरूप हो जाय। गुरदेव जी कहते हैं कि यह सेवकी या यह प्रेम क्या हुआ, जिस में जिज्ञासु की परमेश्वर के साथ विरक्तता कायम रहे और उसके मन में से वाहिगुरू के प्रति डर, शक-शुबहे तथा भ्रम दूर न हों। आदर्श ईश्वरीय प्यार वहीं कहलवा सकता है, जिस में ईश्वर के साथ पूर्ण विलीनता हो जाय। यथा :

"एह किनेही चाकरी, जितु भउ खसम न जाइ ॥

नानक सेवकु काढीऐ, जि सेती खसम समाइ ॥" [आसा की वार, महला १ में से]

संसार में जीव कई बार औपचारिकता होने व्यक्ति के कारण मजबूरी में कुछ काम करता है, जिनके साथ व्यक्ति के मन की कोई सांझ नहीं होती है। भ्रातृत्व में नाक रखने के विचार से वह कई बार कई धार्मिक समझे जाने वाले काम करता है। यह काम प्रेम भक्ति के नाटक तथा दान-पुन्य के दिखलावे आदि है। ये काम वह सच्चे दिल से नहीं करता और केवल मजबूरी में बेकार समझकर करता है। आत्मिक जीवन में इस प्रकार के कामों का कोई महत्त्व नहीं हैं।

गुरूदेव कहते हैं कि जो मनुष्य, झूठे दिखावे मात्र के लिए मजबूरी में बंधे होने के कारण प्रभु भक्ति का नाटक करते हैं, या और कोई दान पुण्य का कर्म करते हैं, उन कामों का न तो उन को स्वयं ही लाभ है और न इस से दूसरों का ही भला होता है। वही काम श्रेष्ठ या उत्तम कहलवा सकता है जो मनुष्य द्वारा दिल और मन से किया जाये। यदि परमेश्वर की भक्ति दिल के चाव तथा उमंग से की जायेगी तो ही वह सफल भक्ति कहलवा सकेगी। दिखलावे वाली मजबूरियों भरी भक्ति वास्तव में नकली चीज़ है। यथा :

बधा चटी जो भरे, ना गुणु ना उपकारु ॥

सेती खुसी सवारीऐ, नानक कारजु सारु ॥ [सूही की वार, महला ३ में से]

गुरू अंगद देव जी के अनुसार परमेश्वर वाली दिशा (direction) वही पुरूष हासिल कर सकता है जो अच्छी नेक भावना वाला हो और गुरू के शब्द को विचार कर समझता हो।। केवल मन के हठ के द्वारा, ईश्वर की दिशा को नहीं जीता जा सकता, चाहे मन के हठ के द्वारा कितना ही परिश्रम क्यों

न कर लिया जाए। वास्तव में ईश्वर की प्राप्ति उत्तम विचारों और सच्चे निष्कपट प्यार बिना संभव नहीं है। यथा :

मन हठि तरफ न जिपई, जे बहुता घाले //

तरफ जिणै सत भाउ दे, जन नानक सबदु वीचारे //

[सूही की वार, महला ३ में स)

गुरू अंगद देव जी के विचारा के अनुसार परमेश्वर को हृदय में वसा लेने से ही उस की प्राप्ति हो सकती है, झूठे दिखलावे के मिलाप का कोई महत्त्व नहीं है। झूठे भेष या रस्मों रिवाज पूरे कर लेने से ही परमेश्वर नहीं मिलता। परमेश्वर तभी मिलता है यदि मनुष्य दिल और मन से, उस में मिल जाय या विलीन हो जाये। वास्तव में वह व्यक्ति ही ईश्वर के साथ मिला हुआ कहलवा सकता है जो अंतर आत्मा से ईश्वर के साथ मिला हो। यथा :

"मिलिऐ मिलिआ न मिलै, मिलै मिलिआ जे होइ //

अंतर आतमै जो मिलै, मिलिआ कहीऐ रे सोइ //" (सूही की वार महला ३ में स)

गुरू अंगद देव जी जिज्ञासु को अपने हृदय में प्रभु के लिए अब प्यार पैदा करने का उपदेश देते हैं। सच्चा प्रेमी, केवल मात्र परमेश्वर का आश्रय तथा प्यार ही देखता है और जब तक उस को परमेश्वर की प्राप्ति नहीं हो जाती है, वह परमेश्वर के प्यार के लिए ही हर समय रोता-मरता रहता है, भाव दिल मन से परमेश्वर को ही पुकारता रहता है।

गुरदेव, गुरू अंगद देव जी कहते है कि सच्चा जिज्ञासु तो ईश्वर के आगे हर समय यह विनती करता रहता है कि हे परमेश्वर, किसी मनुष्य ने कोई आश्रय लिया है, और किसी ने कोई। मुझ नीच जीव स्त्री का आश्रय केवल तूं ही है। जब तक, हे परमेश्वर ! तूं मेरे मन विचार में आ कर नहीं बस जाता, तब तक मैं तेरे प्यार की खातिर हर समय क्यों न रोता मरता रहूं, सच्चा ईश्वरीय प्यार वही हो सकता है जब जीव, अन्य सभी आशायें छोड़ कर परमेश्वर का ही आश्रय ले। यथा :

किस ही कोई कोइ, मंञू निमाणी इकु तू //

किउ न मरीजै रोइ, जा लगु चिति न आवही // [सूही की वार, महला ३में स]

गुरू अंगद देव जी जिज्ञासु को दृढ़ करवाते हैं कि मनुष्य जब प्यारे परमेश्वर के संग प्यार डालना चाहता है, तो उस के लिए ज़रूरी है कि वह परमेश्वर की इच्छा के आगे अहं-रहित हो कर चले। संसार में उस जीवन पर धिक्कार है जो ईश्वरेच्छा से बेमुख हो कर जीवित है। सच्चे जिज्ञासु के लिए ज़रूरी है कि वह अहं का त्याग कर के प्रभु की रज़ा में राज़ी रह कर चले। यथा :

"जिसु पिआरे सिउ नेहु, तिसु आगै मरि चलीऐ //

ध्रिग जीवणु संसारि, ता कै पाछै जीवणा //" [सिरी राग की वार, महला ४में से]

8. ईश्वरीय कृपा की आशा

मनुष्य का सामर्थ्य सीमित है, इसलिए उस की बड़ी से बड़ी कमाई का महत्त्व भी सीमित होना लाज़मी है। प्रभु अनन्त है, इसलिए उस में विलीन होने के लिए मनुष्य केवल मात्र अपनी कमाई पर आश्रय नहीं रख सकता और न ही यह बुद्धिमत्ता कही जा सकती है। फिर, सब से अधिक, गुंझलदार बात तो यह है

कि यदि मनुष्य अपनी कमाई या अपने प्रयास द्वारा कुछ ऊंची आत्मिक अवस्था प्राप्त कर ले, उस काअहं से ग्रसीत हो जाना स्वाभाविक–सा होता है और यह अहं उस की सारी कमाई पर पानी डाल देता है। फिर जब निश्चित तौर पर मनुष्य की कमाई की औकात भी अल्पकालिक हो, तो स्पष्ट है कि बेहतर रास्ता तो यही होगा कि मनुष्य अपने प्रयास का आश्रम लेने की जगह पर ईश्वरीय कृपा की आशा करे।

गुरू अंगद देव जी कहते है कि अपने प्रयास या कमाई की जगह पर हमें वाहिगुरू की कृपा की आशा करनी चाहिए। यदि हम यह कहें कि हमने अपने उद्यम द्वारा या अपनी कमाई द्वारा, असमाप्य वस्तु प्रात की है, तो यह कैसी कृपा हुई ? यह तो बदला या इवज़ाना हुआ। कृपा तो वही चीज़ कहलवा सकती है, जो वाहिगुरू के प्रसन्न होने पर प्राप्त होती है। भाव यह कि उद्यम करते हुए भी हमें वाहिगुरू की कृपा पर ही आश्रय रखना चाहिए। यथा :

"एहु किनेही दाति, आपस ते जो पाइऔ ॥

नानक सा करमाति, साहिब तुठै जो मिलै ॥" [आसा की वार, महला १ में से]

9: परमेश्वर के यश-गायन में विलीन होने से ऊंचा कोई उपदेश नहीं

सब उपदेशों में से ऊंचा उपदेश परमेश्वर के यश या स्तुति गायन में जुड़ना है।

गुरू अंगद देव जी के अनुसार जिन जिज्ञासुओं ने गुरू धारण किया है और जिन को गुरू ने शिक्षा दे कर ब्रह्म ज्ञान करवाया है और जो मनुष्य ईश्वरीय यश गायन में जुड़ कर सदा कायम रहने वाले परमेश्वर में लीन हुए हैं, उन्हें और किसी प्रकार के उपदेश की ज़रूरत नहीं रहती। उन्हें और कौन सा उपदेश दिया जा सकता है ? सभी उपदेश का निचोड़ तो प्रभु सिमरन ही है। यथा :

"दीखिआ आखि बुझाइआ, सिफती सचि समेउ ॥

तिन कउ किआ उपदेसीऐ, जिन गुर नानक देउ ॥"

[माझ की वार, महला १ में से]

गुरू अंगद देव जी कहते है कि सिमरन या स्तुति भी कृत्रिम तथा पैदा किये जीवों की नहीं, देवी–देवताओं, अवतारों या उन की मूर्तियों की नहीं, उस केवल-मात्र परमेश्वर की ही करनी चाहिए जो सारी सृष्टि का रचनाकार है। मनुष्य के लिए सही बात भी यही है क्योंकि वह स्वयं ईश्वरीय वास्तविकता या ईश्वरीय मूल वाला है, इस लिए ईश्वर में मन जोड़े तथा उस का यश गायन करे। कुदरती बात भी यही है कि चलते–फिरते जीवन का संग साथ चलता हुआ जीव ही करता है तथा उड़ने वाले जीवों का स्वाभाविक संग साथ, उड़ने वाले जीवों के संग ही होता है। ज़िंदा दिल उत्साही जीव अपने स्वभाव से मिलते–जुलते ज़िंदा-दिल, उद्यमी तथा कर्मशील मनुष्यों, का संग, साथ करना पसंद करते हैं और इसी तरह मृतक आत्माओं के मालिक मनुष्य अपने जैसी मृतक आत्माओं का साथ करने की आशा करते है। इसलिए ऐसे कुदरती नियमों को देख कर मनुष्य को चाहिए कि वह अपने तथा सृष्टि के रचनाकार, परमेश्वर में अपना मन जोड़े। यथा :

"तुरदे कउ तुरदा मिलै, उडते कउ उडता ॥

जीवते कउ जीवता मिलै, मूए कउ मूआ ॥

नानक सो सलाहीऐ, जिनि कारणु कीआ ॥"

[सूही की वार, महला ३ में से]

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि हमें उस परमेश्वर का यश गायन करना चाहिए जो संसार के सभी जीवों को आहार आदि का आसरा दे रहा है। सृष्टि की रंगीनियों तथा खेड़े को देख कर कई बार जीवन इन में फंस जाता है और परमेश्वर को भूल बैठता है। गुरू अंगद देव जी मनुष्य को समझते हुए कहते हैं कि हे मानव ! तुम उस परमेश्वर के गुणों के बारे में विचार करो जो संसार में संसारिक रंगीनियों तथा खेड़े के आगमन से पूर्व, संसार में मौजूद है और जो सांसारिक रंगीनियों तथा खेड़े रूपी बसंत का भी कर्त्ता अथवा कारण है। यथा :

"पहलि वसंतै आगमनि, तिसका करुहु बीचारु ॥

नानक सो सलाहीऐ, जि सभसै दे आधारु ॥" [सूही की वार महला ३ में से]

10. नाम ही अमृत है

गुरू अंगद देव जी के विचारा अनुसार वास्तविक अमृत केवल परमेश्वर का नाम सिमरन या सच्चा ईश्वरीय प्यार ही है। और के और बनावटी जल अमृत नहीं हो सकते। परमेश्वर का नाम सिमरन ही मनुष्य को आत्मिक तौर पर स्थायी जीवन प्रदान कर सकने वाला अमृत है। गुरदेव जी कहते है कि जिन व्यक्तियों को परमेश्वर के नाम की स्तुति की दात मिली हुई है, वे मनुष्य हमेशा मन में ईश्वरीय प्यार के रंग में रंगे हुए रहते हैं।

गुरूदेव जी के अनुसार, नाम रूपी अमृत का टिकाना तो मनुष्य का हृदय ही है, पर अपने ही हृदय में से इस नाम अमृत की प्राप्ति, केवल सतगुरू की कृपा द्वारा ही होती है। जिन व्यक्तियों के भाग्य में आरंभ से ही यह नाम अमृत की निधि लिखी हुई होती है, वे भाग्यवान जीव ही मौज से इस नाम रूपी अमृत के आनंद को पाते हैं। यथा :

"जिन वडिआई तेरे नाम की, ते रते मन माहि ॥

नानक अमृतु एक है, दूजा अमृत नाहि ॥

नानक अमृत मनै माहि, पाईऔ गुर परसादि ॥

तिन्ही पीता रंग सिउ, जिन कउ लिखिआ *आदि* ॥"

[सारंग की वार, महला ४ में से]

नोट- पांच प्यारों द्वारा खंडे बाटे द्वारा, सिख रहित मर्यादा के अनुसार सेवन कराया जाने वाला अमृत वास्तव में नाम अमृत ही है। नाम अमृत को हृदय में धारण करने के लिए सतगुरू साहिबान की ओर से बतायी गयी रहित धारण करना और कुरहितों से बचना तथा सतगुरू साहिबान द्वारा दृढ़ करवायी गयी जीवन युक्ति को अपनाना लाज़मी है।

11. अरदास केवल परमेश्वर के आगे ही हो सकती है।

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि मनुष्य को अन्य कृत्रिम तथा पैदा किये जीवों की खुशामद में ख्वार होने की जगह पर एक मात्र परमेश्वर के आगे अरदास करनी चाहिए जो सभी जीवों के दिलों की जानता है और समझता है, जो सभी जीवों को पैदा करता है और जो स्वयं ही सभी जीवों के कार्य संपूर्ण करता है। ऐसे अंतर्यामी, सृजनहार तथा पालनहार प्रभु को छोड़ कर उसके पैदा किये जीवों का आश्रय नहीं

लेना चाहिए। ऐसे सर्वशक्तिमान और सारी सृष्टि के दाता परमेश्वर के आगे मान–सम्मान सहित अरदास करना ही जिज्ञासु को शोभा देता है। यथा :

"आपे जाणै करे आपि, आपे आणै रासि ॥

तिसै अगै नानका, खलिइ कीचै अरदासि ॥ " [मारू वार, महला ३ में से]

12. दातार केवल परमेश्वर है और वही स्तुति योग्य है।

सांसारिक सुखों की खातिर या धन माल की खातिर, आम मनुष्य धनाढ्य लोगों की खुशामद करते फिरते हैं। फिर अनेकों धनवाद पुरूष अपने एकत्र किये गये धन में से कुछ रकम दान पुण्य पर लगा कर अपने आप को दातार समझ रहे हैं। गुरमत के अनुसार तो संसार के सभी जीवों का एक मात्र दातार परमेश्वर है और वही आराधना के योग्य है।

गुरू अंगद देव जी इस विषय में कहते हैं- परमेश्वर को छोड़ कर परमेश्वर के पैदा किये जीवों की खुशामद करने का क्या लाभ हो सकता है ? मनुष्य को उस परमेश्वर की स्तुति करनी चाहिए जो सभी जीवों को पैदा करता है और पालता है। गुरू अंगद देव जी मनुष्यों को यह निश्चय दृढ़ करवाने का उपदेश करते हैं कि एक मात्र परमेश्वर के अतिरिक्त कोई और दातार हो ही नहीं सकता। जिस प्रभु ने यह सारी सृष्टि रची है, उस का ही हमें यश करना चाहिए। उस दातार परमेश्वर मात्र का ही सिमरन करना चाहिए जो संसार के सभी जीवों को आसरा देकर पालन पोषण करता है।

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि परमेश्वर के भण्डारे सदा भरे रहते हैं और वह स्वयं सदा कायम रहने वाली हस्ती है। केवल उस परमेश्वर का यश करना चाहिए जिसका कोई पारावार नहीं। यथा :

"कीता किआ सालाहीऐ, करे सोइ सालाहि ॥

नानक ऐकी बाहरा, दूजा दाता नाहि ॥

करता सो सालाहीअै, जिनि कीता आकार ॥

दाता सो सालाहीअै, जिस सभसै देई आधार ॥

नानक आपि सदीव है, पूरा जिसु भंडारु ॥

वडा करि सालाहीअै, अंतु न पारावार ॥" [सारंग की वार, महला ४ में से]

13. परमेश्वर का भय सांसारिक भय से बचाता है

जो व्यक्ति ईश्वर के भय में विचरण करते हैं, वे किसी सांसारिक भय की मार में नहीं आते हैं। परमेश्वर का भय उनको निर्भय अवस्था प्रदान करता है। वे पुरुष, जिन के मन में ईश्वर का भय-खौफ नहीं, उन को सदा सांसारिक भय दबाये रखते हैं। पर इस वास्तविकता का ज्ञान उसी समय होता है जब मनुष्य ईश्वर के दरबार का सदस्य बन जाये। ईश्वरप्रस्त लोग संसार में सदा निर्भय हो कर विचरण करते हैं और उनको संसार में कोई विषय-विकार अपनी मार में नहीं ला सकता, जब कि ईश्वर से बेखौफ लोग, सदा सांसारिक भयों से दुखी रहते हैं और विषय–विकारों की मार खाते रहते हैं। यथा :

"जिना भउ तिन नाहि भउ, मुचु भउ निभविआह ॥

नानक ऐहु पटंतरा, तितु दीबाणि गइआह ॥" [सूही की वार, महला ३ में से]

14. ईश्वरेच्छा में राज़ी रहना ही एकमात्र सफल साधन है

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि मनुष्य को वही काम अच्छा करके मानना चाहिए जो उस परमेश्वर को भाता है। विचरण व व्यवहार वही करना है जो परमेश्वर को स्वीकार्य हो। मनुष्य के चाहने या न चाहने से कोई अंतर नहीं पड़ सकता। मनुष्य के बस में तो केवल यही बात है कि या तो वह परमेश्वर की इच्छा में राज़ी होने की जगह पर किंतु करके अपने मन में क्लेश डाले रखे या फिर परमेश्वर की इच्छा में राज़ी रह कर अपना जीवन सफल कर ले।

गुरू अंगद देव जी समझाते हुए कहते हैं कि जो परमेश्वर हमारे घट घट की जानने वाला है, उस के आगे किंतु करना या हील हुज्जत करना शोभा नहीं देता है। मालिक, स्वीकार्य मालिक है क्योंकि उसका हुक्म कोई मोड़ नहीं सकता। बलवान बादशाहों, बेगमों और फौजी ज़रनैलों को भी उसके हुक्म के अनुसार ही चलना पड़ता है। इस कारण बुद्धिमता तो इसी बात में है कि मनुष्य उस काम को अच्छा करके माने जो परमेश्वर को भाता हो।

परमेश्वर को छोड़ कर उसके पैदा किये मनुष्यों के आगे यूं-यूं करना, कोई अक्ल की बात नहीं है। ये मनुष्य चाहे बादशाह, धनवान तथा बड़े जरनैल ही क्यों न हो, इनके हाथ में या वश में तो कुछ भी नहीं, क्योंकि इन सब को तो ईश्वर के अटल कानून के अनुसार ही चलना होता है। जब भी मालिक का हुक्म होता है, ये जीव यहां से उठकर परलोक की राह पर पड़ जाते हैं। जैसा हुक्म लिखा हुआ आता है, जीव उसी प्रकार हुक्म की कमाई करते हैं। सभी जीव (बादशाहों, धनवानों तथा जंगी जरनैलों सहित) मालिक प्रभु की ओर से भेजे जाने पर संसार में आते हैं और उसके द्वारा बुलाये हुए यहां से उठ कर चल पड़ते हैं।

अत: ईश्वर की रज़ा में राज़ी रहना तथा उस के द्वारा बनाये गये किसी मनुष्य को भी उसके तुल्य न समझना ही गुरमत का सही रास्ता है। यथा :

"तिसु सिउ कैसा बोलणा, जि आपे जाणै जाणु //
चीरी जा की न फिरै, साहिबु सो परवाणु //
चीरी जिसकी चलणा, मीर मलक सालार //
जो तिसु भावै नानका, साई भली कार //
जिन्हा चीरी चलणा, हथि तिना किछु नाहि //
साहिब फुरमाणु होइ, उठी करलै पाहि //
जेहा चीरी लिखिआ, तेहा हुकमु कमाइ //
घले आवहि नानका, सदे ऊठी जाहि // " [सारंग की वार, महला ४ में से]

15. माया के बारे चिंता--से मुक्त रह कर ईश्वर पर निश्चय करना चाहिए

मनुष्य को धन-दौलत के बारे में चिंता कर के परमेश्वर को नहीं भुला देना चाहिए। प्रत्येक जीव के धन दौलत की चिंता स्वयं परमेश्वर कर रहा है। परमेश्वर ने अनन्त जीव जल में ही पैदा कर रखे हैं। वह उन सभी जीवों को खुराक दे रहा है। पानी में न कोई दुकान चलती है और न कोई जीव खेतीबाड़ी ही करता है। वहां पर न सौदा होता है और न लेन-देन का ही धंधा चलता है, पर वहां पर भी परमेश्वर

ने खुराक की यह विधि बना दी है कि वहां पर जीवों की खुराक अन्य जीव बन गये हैं। परमेश्वर ने जिन को समुद्रों में पैदा किया है उन जीवों की भी परमेश्वर स्वयं संभाल कर रहा है। गुरू अंगद देव जी जीवों को समझाते हैं कि रोज़ी के लिए चिंता नहीं करनी चाहिए क्योंकि प्रत्येक जीव की खुराक के लिए परमेश्वर को स्वयं ही चिंता है। यथा :

"नानक चिंता मति करहु, चिंता तिस ही हेइ ॥

जल महि जंत उपाईअनु, तिना भि रोजी देइ ॥

ओथै हटु न चलइ, न को किरस करेइ ॥

सउदा मूलि न होवई, ना को लए न देइ ॥

जीआ का आहार जीअ, खाणा एहु करेइ ॥

विचि उपाए साइरा, तिना भि सार करेइ ॥

नानक चिंता मत करहु, चिंता तिसही हेइ ॥" [रामकली की वार, महला ३ में से]

17. जप तप के साधन ईश्वरीय प्यार के मुकाबले में नगण्य हैं।

प्रभु की प्राप्ति के लिए पराधर्मों ने समय समय पर जप तथा तप के साधन तजवीज़ किये हैं। गुरू अंगद देव जी के अनुसार जप-तप के साधनों का कोई महत्त्व नहीं है। आप कहते हैं कि यदि जिज्ञासु का मन ईश्वर के प्यार में पसीज जाये तो जप या तप आदि सभी साधन बीच में ही आ गये समझो। यदि ईश्वरीय प्यार में जिज्ञासु का मन नहीं पसीजा तो जप तप आदि सभी साधन निरर्थक ही समझने चाहिए। ईश्वरीय प्यार में पसीजा या रहने वाला मनुष्य ही आत्मिक मंडल में आदर पाता है। इस वास्तविकता का ज्ञान सतगुरू की कृपा द्वारा ही होता है। ईश्वरीय प्यार के मुकाबले जप तप आदि कर्म महत्त्वहीन है। यथा :

"जपु तपु सभु किछु मंनिऐ, अवरि कारा सभि बादि ॥

नानक मंनिआ मंनीऐ, बुझीऐ गुर परसादि ॥"[रामकली की वार, महला ३ में से]

18. अहं के दीर्घ रोग से छुटकारा, केवल गुरू के शब्द की कमाई से ही हो सकता है

जब तक मनुष्य का अहं से छुटकारा नहीं होता तब तक वह परमेश्वर की दरगाह में स्वीकार्य नहीं हो सकता। कर्म कांडों के फोके विचोरों में पड़ने से ऊंची नीची जातियों के भेद भाव के तथा अच्छे बुरे कर्म कांडों की बांट, मन पर बहुत भारी हो जाती है और अहं के विचार और अधिक दृढ़ हो जाते हैं।

सतगुरू साहिबान की बाणी असलीयत को बयान करने वाली अमृतबाणी है। यह परमेश्वर के गुणों की विचार करने तथा परमेश्वर में ध्यान जोड़ने से प्रकट हुई है। गुरू ने यह बाणी उच्चारण की है और इस बाणी के गहरे भेदों को गुरू ने ही समझा है। परमेश्वर के नदर-कर्म से सुरति ने इस बाणी में ध्यान जोड़ा है। सतगुरू साहिबान की इस अमृत बाणी का आसरा लेकर यह ज्ञान होता है कि परमेश्वर ने अपना हुक्म अथवा अटल कानून बना कर सृष्टि के सभी जीवों को अपने क्म में रखा है और अपने हुक्म अथवा अटल कानून के अनुसार ही सब की देखभाल करता है। ऐसा सोच कर जिस जीव ने भी पहले अपने अहं को तोड़ा है, वह जीवन ही प्रभु की हजुरी में किसी लेखे में गिना जा सकता है।

नहीं तो संसार की कथा-कहानियां तथा ज्ञान की पुस्तकों ने पाप और पुण्य के नाम पर अच्छे-बुरे कर्म कांडों का विचार बहुत प्रसारित किया है। दान दे-दे कर अगले जन्म में मोड़ लेना और दान ले-ले कर

अगले जन्म में वापिस देना तथा कर्म-कांडों की कमाई के आधार पर स्वर्ग या नर्क में जाने की काफी चर्चा हुई है। इस प्रकार की तालीम ने उत्तम तथा मध्यम जातियों तथा किस्मों के भ्रमों और भेदभावों में मनुष्यों को बुरी तरह फंसाया है और इस प्रकार सारा संसार इन भेद भावों तथा भ्रमों में भटकता फिरता है। इन भेद-भावों तथा भ्रमों से उपजी अहं भावना से केवल सतगुरू की बाणी ही छुटकारा दिलवा सकती है। यथा :

"कथा कहाणी बेदी आणी, पापु पुंनु वीचारु ॥
दे दे लैणा लै लै देणा, नरकि सुरगि अवतार ॥
उतम मधिम जाती जिनसी भरमि भवै संसार ॥
अंमृत बाणी ततु वखाणी, गिआन धिआन विचि आई ॥
गुरमुखि आखी गुरमुखि जाती, सुरती करमि धिआई ॥
हुकमु साजि हुकमै विचि रखै हुकमै अंदरि वेखै ॥
नानक अगहु हउमै तुटै, ता को लिखीऐ लेखै ॥"

[सारंग की वार, महला ४ में से]

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि अहं का प्रमुख लक्षण ही यही है कि जीव अहं वाले कर्म करते हैं। अहं के बंधन भी यही हैं कि जीव बार-बार योनियों में घुमाये जाते हैं। प्रश्न उत्पन्न होता है कि अहं कहां सेउत्पन्न होता है; और किस प्रकार यह दूर हो सकता है। इस बात का उत्तर सतगुरू साहिबान स्वयं देते हैं और कहते हैं कि अहं वाहिगुरू के हुक्म के अनुसार ही पैदा होता है और जीव पिछले क्रिये गये कार्यों के संस्कारों के अनुसार बार-बार उन्हीं कामों को करने के लिए दौड़ते हैं जिनसे उनका पहला स्वभाव ही कायम हो कर पक जाता है।

अहं एक लंबा तथा लम्बे समय तक रहने वाला रोग है पर इस रोग का इलाज भी है। यदि वाहिगुरू अपनी कृपा करे तो जीव, गुरू के उपदेश को कमाने लग जाते हैं। गुरूदेव जी कहते हैं कि हे लोगो, सुनो गुरू का उपदेश कमाने की युक्ति से अहं के दुख दूर हो जाते हैं। यथा :

"हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि ॥
हउमै एई बंधनां फिरि फिरि जोनी पाहि ॥
हउमै किथहु उपजै, किति संजमि इह जाइ ॥
हउमै एहो हुकमु है, पइऐ किरति फिराहि ॥
हउमै दीरघ रोगु है, दारू भी इस माहि ॥
किरपा करे जे आपणी तां गुर का सबदु कमाहि ॥
नानक कहै सुणहु जनहु इतु संजमि दुख जाहि ॥"

[आसा की वार, महला १ में से]

19. अच्छाई तथा बुराई क्या है।

सच्चे जिज्ञासु के लिए यह आवश्यक है कि वह दिखावे का भक्त न हो। वह अंदर-बाहर से एक रूप हो कर प्रभु के साथ सच्चा प्यार डाले, तो ही उसकी सेवा सफल हो सकती है।

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि मनुष्य के दिल में जो कुछ होता है, वह उसकी बाहरी ज़िंदगी में से प्रकट हो ही जाता है। यदि दिल में कुछ और हो और मुंह से उसके विपरीत और बातें की जायें तो वह बातें मुंह में से मारी हुई फूंक की भांति निरर्थक तथा व्यर्थ जाती हैं क्योंकि मनुष्य की अंदर के विचार व्यावहारिक जीवन के द्वारा प्रकट हो ही जाते हैं। सतगुरू साहिबान मनुष्य पर तीखा कटाक्ष करते हुए कहते हैं कि मनुष्य बोता तो ज़हर है, पर इस ज़हर की बुआई में से अमृत फल की आशा रखता है। यह भी कोई न्याय तथा अधिकार की बात है ?

भाव यह कि मनुष्य को दिल-मन से ईश्वर का सच्चा भगत और नेक व्यवहार वाला बनना चाहिए। यथा:

"जो जी ; होइ सु उगवै मुह का कहिआ वाउ ॥

बी ने विखु मंगै अंमृतु वेखहु एहु निआउ ॥" [आसा की वार महला १ में से]

मनमुख के लक्षणों का वर्णन करते हुए गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि मन की अगवाई लेने वाला मनुष्य ऐसा होता है कि उस को दातार प्रभु से उसके दिये हुए मायावादी पदार्थ अधिक अच्छे लगते हैं। ऐसे मनमुख पुरूष की सूझ, अकल तथा बुद्धिमता इतनी नीची होती है कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। वह अंदर बैठ कर तथा छिप कर कई कुकर्म करता है परंतु उसके छिप कर कमाये गये कुकर्म भी चारों ओर प्रसारित हो ही जाते हैं।

बात है भी बहुत सीधी तथा साफ कि जो व्यक्ति व्यावहारिक तौर पर धर्म की कमाई करता है, उसी का नाम धर्मात्मा हो सकता है। पाप कर्म कमाने वाले व्यक्ति को पापी कह कर ही जाना जाता है।

हे परमेश्वर, तूं सृष्टि का यह सारा खेल आप ही कर रहा है तेरे से भिन्न और कौन बताएं ? जितनी देर तक जीवों में तेरी ज्योति है, उतनी देर तूं उन जीवों में स्वयं ही बोलता है। जब तेरी ज्योति जीवों में से निकल जाय, तो भला कोई कुछ करके तो बताये, हम भी देख कर पहचानें। इसीलिए गुरू की शरण आये मनुष्य को जर्रे-जर्रे के अंदर विलीन एका एक सुघड़-सुजान परमेश्वर के दीदार होते हैं और वह अहंकार में नहीं आता।

भाव यह कि हम दिल-मन से नेक और धर्मात्मा बनें और नेक व्यवहार करें, तो ही प्रभु के सम्मुख स्वीकार्य हो सकते हैं। मनुष्यों की तरह दातार के मुकाबले निधि को अधिक प्यार करना, सूझ, अक्ल तथा बुद्धिमत्ता को अति नीचा कर लेना तथा लोगों की नज़रों से छिपा कर पाप कर्म कमाना तथा बाहर से धर्मात्मा होने का ढोंग करना, इस विधि के साथ साथ परमेश्वर की दरगाह में हम धर्मात्मा नहीं कहलवा सकते। यथा :

"देदे थावहु दिता चंगा, मनमुखि ऐसा जाणीऐ ॥

सुरति मति चतुराई ताकी, किआ करि आखि वखाणीऐ ॥

अंतरि बहि कै करम कमावै, सो चहु कुंडी जाणीऐ ॥

जो धर्म कमावै तिसु धरम नाउ होवै, पापि कमाणै पापी जाणीऐ ॥

तूं आपे खेल करहि सभ करते, किआ दूजा आखि वखाणीऐ ॥

जिचर तेरी जोती, तिचर जोती विचि तूं बोलहि,

विण जोती कोई किछु करिहु, दिखां सिआणीऐ ॥

नानक गुरमुखि नदरी आइआ, हरि इको सुघड़ु सुजाणीऐ ॥"

[माझ की वार, महला १ में से]

गुरू अंगद देव जी ने संसार के जीवों की कर्म दशा का बड़ा भाव पूर्ण चित्र खींचा है। इस चित्र में अच्छाई तथा बुराई और उनके फल के संबंध में बहुत संक्षिप्त में सैद्धांतिक प्रकाश डाल दिया गया है। बच्चों के पालन पोषण में माता–पिता तथा उस्ताद का बहुत बड़ा योगदान होता है। इसी प्रकार खिलावनहार व खेलने वाले का बच्चे के पालन–पोषण में बहुत बड़ा योगदान होता है। संसार के जीवों के लिए मानों धरती माता है, पानी पिता है और हवा मानों उस्ताद है। संसार के जीवों के लिए दिन और रात मानों खलावनहार और खिलाड़ी हैं। इस प्रकार संसार के सभी जीवों का जीवन धरती, पानी–पवन तथा दिन–रात के आसरे बीत रहा है और मानों सारा संसार ही इस प्रबंध में खेल रहा है।

जीव, अच्छाई तथा बुराई के काम अपने सामर्थ्य के अनुसार अपने ही ढंग से कर रहे हैं। जीवों द्वारा कमाई गई अच्छाई तथा बुराई परमेश्वर की हज़ूरी में नित्य ही धर्म–राज देखता रहता है। अपनी अपनी कमाइयों, अच्छाई तथा बुराई के अनुसार कई जीव परमेश्वर के समीप होते जा रहे है और कई जीव परमेश्वर से दूर होता जा रहे हैं।

इस जीवन में जिन व्यक्तियों ने भी परमेश्वर के नाम का सिमरन किया है, वे जानों अपनी मेहनत सफल कर गये हैं। वे आत्माएं परमेश्वर के सम्मुख उज्ज्वल मुख होती हैं और कई और जीव उन की संगत में रह कर विषय-विकारों से छूट कर अपना मानव जीवन सफल कर लेते हैं।

जीवन की कर्मभूमि में उन का जीवन ही सफल होता है जो बुराई से बच कर नेकी वाला जीवन व्यतीत करते हैं और परमेश्वर के साथ सच्चा प्यार डालते हैं। यह नियम संसार की सभी जातियों, नस्लों, कौमों, रंगों, देशों के जीवों के लिए एकसार सांझा है। यथा :

"पउणु गुरू, पाणी पिता, माता धरति महतु ॥

दिनसु राति दुइ दाई, दाइआ, खेलै सगलु जगतु ॥

चंगिआईआं बुरिआईआं, वाचे धरमु हदूरि ॥

करमी आपो आपणी, के नेड़ै के दूरि ॥

जिनी नामु धिआइआ, गए मसकति घालि ॥

नानक ते मुख उजले, होर केती छुटि नालि ॥"

[माझ की वार, महला १ में से]

20. एक धर्म ही सारी मानवता के लिए साझा है

संसार के अनेकों धर्म प्रचारों के अलग-अलग जातियों, देशों, प्रांतों, नस्लों आदि के लिए अलग-अलग प्रकार के धर्म बताये हैं। उन में से अधिकतर ने धर्म के वास्तविक रूप की पहचान नहीं की। यदि धर्म

के वास्तविक रूप की पहचान हो जाये तो स्वयं ही समझ आ जाती है कि संसार के प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक साझा धर्म है जो सर्वसाझा नाम सिमरन या ईश्वरीय प्यार का धर्म है।

पुराने शास्त्रों की बांट के अनुसार जोगियों का धर्म–ज्ञान का धर्म है, भाव जोगी ज्ञान के द्वारा ईश्वर को प्राप्त करते हैं। ब्राह्मणों का धर्म वेद पाठों का अभ्यास है, क्षत्रियों का धर्म शूरवीरता है तथा शूद्रों का धर्म दूसरी जातियों की सेवा करना है, पर गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि जो कोई मनुष्य वास्तविकता को समझे तो प्रकट हो जायेगा कि संसार के सभी लोगों के लिए एक ही धर्म है और वह है नाम सिमरन तथा ईश्वरीय प्रेम का धर्म। गुरदेव कहते हैं कि जो मनुष्य इस वास्तविकता को समझ ले, मैं उस का दास हूं और ऐसा मनुष्य मानों प्रभु का रूप ही हैं।

वैसे यह बात है भी बिल्कुल स्वाभाविक कि जो काम किसी एक विशेष कौम के व्यक्ति के लिए बुरा है, वह काम दूसरी कौमों के लोगों के लिए भी बुरा होगा और इसी प्रकार जों काम किसी एक कौम के व्यक्ति के लिए अच्छा है, वह दूसरी कौमों के लोगों के लिए भी अच्छा होगा। यथा :

"जोग सबदं गिआन सबदं बेद सबदं ब्राह्मणह ॥
खत्री सबदं सूर सबदं, सूद्र सबदं पराक्रितह ॥
सरब सबदं ऐक सबदं जे को जाणै भेउ ॥
नानुक ता का दासु है, सोई निरंजन देउ ॥" [आसा की वार, महला १ में से]

21. सुख का मूल कारण ईश्वरीय प्यार तथा दुःख का मूल कारण ईश्वर से टूट कर मायावादी पदार्थों से प्यार डालना है

गुरू अंगद देव जी के अनुसार मनुष्य के दु:खों तथा सुखों का मूल कारण एक ही तत्त्व है। परमेश्वर को भुलाकर मायावादी पदार्थों के संग प्यार डालने से दु:ख तथा चिंताएं पैदा होती हैं, पर एकीश्वर के संग प्यार डाल लेने से जीवन इतना अडोल तथा टिकाव वाला बन जाता है कि मनुष्य के जीवन में सिवाय आत्मिक सुख के और कुछ नहीं रहता है। किसी दु:ख के समीप आने की गुंज़ाइश नहीं रहती है।

आप जी कहते हैं कि हे जिज्ञासु, सतगुरू रूपी सावन का महीना आकर ईश्वरीय प्यार रूपी बरसात कर रहा है और इसलिए तूं भी उसका लाभ उठा कर परमेश्वर को मन में बसा ले। कारण यह है कि जिन जीव-स्त्रियों का प्यार परमेश्वर पति के अतिरिक्त दूसरे मायावादी रसों में है, वे मंद-भाग्य वाली जीवन स्त्रियाँ सदा दु:खी रहती हैं। परमेश्वर को भूल जाने से सारे सांसारिक दुख व चिंताएं मनुष्य पर भारी हो जाती हैं। यथा :

"सावणु आइआ हे सखी, कंतै चिति करेहु ॥
नानक झूरि मरहि दोहागणी, जिन्ह अवरी लगा नेहु ॥"

[मलार की वार, महला १ में से]

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि हे जिज्ञासु, सतिगुरू रूपी सावन आ गया है, जिससे प्रभु नाम के बसने वाले बादल आ प्रकट हुए हैं। जिन जीव स्त्रियों के मन में अपने परमेश्वर रूपी पति के संग सच्चा प्रम बन गया है वे भाग्यवान अपने जीवन की सेज पर सुख पूर्वक सोती है। भाव यह कि वे मनुष्य जिन्होंने ईश्वर के संग सच्चा प्यार डाला होता है, वे सदा आत्मिक अडोलता की अवस्था में रह कर, सच्चे तथा

स्थायी अनंद में रहते हैं और संसार का कोई दु:ख उनकी इस आनंद की अवस्था को भंग नहीं कर सकता। यथा :

"सावणु आइआ हे सखी, जलहर बरसनहार ॥
नानक सुखि सवनु सोहागणी, जिन् सह नालि पिआर ॥"

[मलार की वार, महला १ में से]

22. परमेश्वर का अपनी सृष्टि के पैदा किये जीवों के साथ गहरा संबंध है।

परमेश्वर सारे संसार में बसा हुआ है और अपने हुक्म अथवा अटल कानून के अनुसार वह जीवों को अच्छी बुरी दिशा में लगाता है। इस सत्य का ज्ञान सतगुरू के मेल द्वारा, उसके द्वारा प्रदत प्रकाश द्वारा ही हो सकता है।

गुरू अंगद देव जी संसार को केवल मिथ्या कहने की जगह पर इस को सदा स्थिर प्रभु के रहने का टिकाना बताते हैं। इस संसार में ही मालिक प्रभु का वास है। कई जीवों को परमेश्वर अपने हुक्म के अनुसार अपने में लीन कर लेता है। प्रभु अपने अटल हुक्म के अनुसार कई जीवों को माया के मोह में से निकाल लेता है और कई जीवों को अपने अटल हुक्म के अनुसार माया में ही विलीन किये रहता है। पर यह बात भी नहीं बतायी जा सकती कि प्रभु किस मनुष्य को सीधे रास्ते पर डालता है।

गुरूदेव के अनुसार, वाहिगुरू के हुक्म का ज्ञान केवल सतगुरू के द्वारा ही हो सकता है, पर यह बात गुरू द्वारा वह मनुष्य ही समझता है, जिस के हृदय में वह स्वयं ज्ञान का प्रकाश कर देता है। यथा :

"इह जगु सचै की है कोठड़ी, सचे का विचि वासु ॥
इकना हुकमि समाई लए, इकना हुकमे करे विणासु ॥
इकना भाणै कढि लए, इकना माईआ विचि निवासु ॥
एव भि आखि न जापई, जि किसै आणे रासि ॥
नानक गुरमुखि जाणीऐ, जाकउ आपि करे परगासु ॥"

[आसा की वार, महला १ में से]

गुरू अंगद देव जी के अनुसार, वाहिगुरू स्वयं ही सारी सृष्टि को पैदा करता है और स्वयं ही इसको संवारता सजाता है। अपनी पैदा की हुई सृष्टि की संभाल भी वह स्वयं ही करता है। (भाव सृष्टि अनियमित नहीं चल रही)

वाहिगुरू स्वयं ही उस सृष्टि में जीवों को पैदा करके, कभी उन जीवों को बना कर और कभी उन्हें भगा कर के, अपनी लीला देखता है, सतगुरू जी कहते हैं कि परमेश्वर को छोड़ कर और किसी के आगे विनती या फरियाद करना उचित नहीं है। क्योंकि परमेश्वर स्वयं ही सब कुछ करने के सम्मर्थ है। यथा :

"आपे साजे करे आपि, जाई भि रखै आपि ॥
तिसु विचि जंत उपाइ कै, देखै थापि उथापि ॥
किसनो कहीऐ नानका, सभु किछु आपे आपि ॥"

[आसा की वार, महला १ में से]

23. आत्मिक मार्ग में मन की टेक हानिकारक है।

संसार का आम मनुष्य अपने मन के नेतृत्व में चलता है। गुरमत में नेतृत्व के लिए केवल सतगुरू का शब्द या उपदेश ही प्रधान है। मन की रहनुमाई में चलने वाले जिज्ञासु को कदम कदम पर ठोकरे लगना स्वाभाविक है। मन के अंदर दो वृतियां प्रधान हैं - पहली इसकी अज्ञानता अथवा सीमित ज्ञान तथा दूसरा अंहकार अथवा यह विचार कि मुझे सब कुछ पता है। अज्ञानता और अहंकार भरे मन की टेक ऊंचा आत्मिक स्तर हासिल करने की राह में एक पक्की रूकावट है।

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि अज्ञानता भरे मन के संग डाली हुई मित्रता तथा अहंकार भरे मन से डाले गये प्यार का कोई महत्त्व नहीं है। भाव यह कि सुंदर जीवन युक्ति के लिए उस मन की टेक नहीं ली जानी चाहिए जो अज्ञानता से भरा है और फिर उस पर उसको अहंकार है कि वह बहुत कुछ जानता है। अज्ञानता भरे मन की दोस्ती और अहंकार भरे मन की वास्तविकता समझाने के लिए दो मिसालें सतगुरू साहिबान ने पेश की हैं। अनजान बालक अज्ञानता का प्रतीक है और मायावादी पुरुष अहंकार का प्रतीक है।

अनजान बालक के संग डाली गयी दोस्ती का कोई महत्त्व नहीं क्योंकि अनजान बालक की अज्ञानता के कारण वह दोस्ती निभ नहीं सकती है। इसी प्रकार मायाधारी पुरूष के संग डाला प्यार भी निभने वाला नहीं होता, क्योंकि एक तो उस के जीवन का ध्येय ही माया होता है और दूसरे मायाधारी व्यक्ति अपने अहंकार के कारण हर किसी को तुच्छ समझता है। बल्कि इसी प्रकार अज्ञानता भरे मन से दोस्ती तथा अहंकार भरे मन से डाला गया प्यार भी कायम रहने वाली चीज़ नहीं है। इनका महत्त्व इतना क्षण भंगुर होता है जितना कि पानी में खींची गयी लकीर का, जिसका कोई ठिकाना पानी में नहीं दिखाई देता है। यथा :

> ***"नालि इआणे दोस्ती, वडारू सिउ नेहु ॥***
> ***पाणी अंदरि लीक जिउ, तिसदा थाउ न थेहु ॥"***

[आसा की वार, महला १ में से]

पहले तो अनजान बालक से कोई काम संपूर्ण होना ही बहुत कठिन है पर यदि कहीं उस से छोटा मोटा एकाध काम संपूर्ण हो भी जाय तो दूसरे को ज़रूर बिगाड़ लेगा। इसी प्रकार अज्ञानता भरे मन को नेतृत्व वाला मनुष्य अव्वल तो आत्मिक मार्ग में कोई प्राप्ति कर ही नहीं सकता, परंतु यदि कहीं इस मार्ग की कोई एक आध छोटी-मोटी प्राप्ति कर भी ले तो भी दूसरे यत्न में उसने अवश्य और बिगाड़ पैदा कर लेना है। इसलिए आत्मिक मार्ग की प्राप्तियां हासिल करने के लिए अज्ञानता भरे मन का नेतृत्व लेना बहुत हानिकारक है। यथा :

> ***"होइ इआणा करे कंमु, आणि न सकै रासि ॥***
> ***जे इक अध चंगी करे, दूजी भी वेरासि ॥"*** [आसा की वार, महला १ में से]

गुरू अंगद देव जी बहुत ही स्पष्ट शब्दों में समझाते हैं कि आत्मिक मार्ग के यात्रियों को अज्ञानी मन की मित्रता कभी रास नहीं आ सकती है। अज्ञानी मन की मित्रता वैसे ही आधारहीन होती है जैसी किसी बेसमझ बालक की दोस्ती। बेसमझ बालक की दोस्ती इसीलिए पार नहीं लगती क्योंकि उस को जितनी समझ होती है, वह वैसे ही व्यवहार करता है। यह कोई भी आजमा कर देख सकता है।

किसी बर्तन में यदि पहले ही कोई चीज़ डाली हो तो दूसरी चीज़ उस में उसी हालत में डाली जा सकती है, जब पहली चीज़ उस में से निकल कर एक ओर रख ली जाय। इसी प्रकार हम अपने मन रूपी बर्तन में ब्रह्म ज्ञान या ईश्वरीय प्यार रूपी वस्तु उस हालत में ही टिका सकते हैं जब उस में से अज्ञानता का पदार्थ निकाल कर एक ओर कर दे। परमेश्वर के साथ हुक्म नहीं चल सकता, उस के संग तो नम्रता सहित और दिल मन से की गयी अरदास ही निभ सकती है। मन की टेक में से नम्रता कहां ? उसने तो सदा अहंकार को ही जन्म देना है। मन की मायावादी पदार्थों की भाग दौड़ में से आत्मिक अडोलता और ईश्वरीय प्यार पैदा नहीं हो सकता, उससे तो मायावादी रूचियां और अधिक प्रबल हो जायेगी। मनुष्य के सदा कायम रहने वाले खेड़े या अनंद की स्थिति में सब्र-संतोष परमेश्वर का यश गायन करने से ही कायम रह सकता है। मन की टेक की जगह पर ईश्वरीय स्तुति गायन की टेक लेना ही उचित है। यथा :

"नालि इआणे दोसती, कदे न आवै रासि ॥
जेहा जाणै तेहो वरतै, वेखहु को निरजासि ॥
वसतू अंदरि वसतु समावै, दूजी होवै पासि ॥
साहिब सेती हुकमु न चलै, कही बणै अरदासि ॥
कूड़ि कमाणै कूडो होवै, नानक सिफति विगासि ॥"

[आसा की वार, महला १ में से]

24. विषय–विकार से रहित मनुष्य ही असली मनुष्य है।

गुरू अंगद देव जी के विचार के अनुसार मालिक परमेश्वर को हम तभी ही मिल सकते है यदि हम उसके हुक्म अथवा उसकी रज़ा को अच्छी तरह पहचान लें। परमेश्वर की रज़ा यही है कि परमेश्वर प्राप्ति का चाहवान जिज्ञासु जिंदा रहते माया मोह की तरफ से भरा हो।

फिर माया के मोह की ओर से मरे हुए ऐसे असली जीवित जिज्ञासु के लक्षण बताते हुए सतगुरू साहिबान कहते हैं कि संसार में विचरण करते समय ऐसे जिज्ञासु मायावादी आंखों से नहीं देखते, माया के आंगन में कानों से नहीं सुनते, माया के आंगन में पैरों से नहीं चलते, न माया के आंगन में हाथों से संसार का काम धन्धा ही करते हैं और न ही माया के आंगन जीभ से बोलते हैं। मायावादी आंख, पराया रूप तथा पराया धन ही देखती रहती है और मायावादी कान, पर निंदा ही सुनने का शौकीन होता है। मायावादी हाथ पैर दूसरों का बुरा करने के लिए दौड़ते हैं और मायावादी ज़बान परनिंदा करने में रस लेती है। पर सच्चा जीवन-मृतक जिज्ञासु अपने नेत्रों, कानों, पैरों, हाथों तथा जुबान आदि अंगों को इन विकारों से बचाकर रखता है और इस प्रकार वह परमेश्वर को प्राप्त कर लेता है। यथा :

"अखी बाझहु वेखणा, विणु कंना सुनणा ॥
पैरां बाझहु चलणा, विणु हथा करणा ॥
जीभै बाझहु बोलणा, इऊ जीवत मरणा ॥
नानक हुकमु पछाणि कै, तऊ खसमै मिलणा ॥"

[माझ की वार, महला १ में से]

गुरू अंगद देव जी के विचारा अनुसार वास्तव में वही व्यक्ति मनुष्य कहलवाने का हकदार होता है जो सच्चे दिल से परमेश्वर को मिलने की इच्छा रखता है और फिर इस इच्छा को पूरा करते हुए परमेश्वर के मिलाप का फल प्राप्त कर ले। वास्तव में वही व्यक्ति मनुष्य की सूरत वाले कहलवा सकते हैं जिनके अंग विषय विकारों की मार से पाक या साफ हों और जिन के शरीर विकारों की मार से गले हुए या दूषित न हों। आत्मिक जीवन के बारे में बात करते हुए ज़रूरत ही इस बात की है कि कोई मनुष्य जैसा काम करता है, उसका वैसा ही नाम पड़ जाय। यथा :

"जैसा करै, कहावै तैसा, ऐसी बनी जरूरति ॥

होवहि लिंङ झिंङ न होवहि, ऐसी कहीअै सूरति ॥

जो ओसु इछे सो फलु पाए, ता नानक कहीऐ मूरति ॥"

[सारंग की वार, महला ४ में से]

25. परमेश्वर के साथ जीव का मिलाप कैसे हो ?

गुरू अंगद देव जी कहते हैं कि परमेश्वर की रचना या सृष्टि पर हम जीव, एक प्रकार से परमेश्वर को देख रहे हैं, उसको सुन रहे हैं तो उसके अस्तित्व को जान रहे हैं। भाव यह कि उसकी कुदरत के अलग-अलग कामों के द्वारा उसके अस्तित्व का अहसास प्रत्यक्ष हो रहा है पर फिर भी परमेश्वर के मिलाप का रस व आनंद जीवों को मिल नहीं रहा। इस सब की वज़ह क्या है ? इस गुंझल का उत्तर गुरू अंगद देव जी इस प्रकार देते हैं। शरीरों के अस्थूल मिलाप के लिए मनुष्य पैरों, हाथों, आंखों आदि अंगों का प्रयोग करता है अर्थात् अपने प्यारे को मिलने के लिए जीव ने इन अंगों से सहायता लेनी होती है। टाँग व बाजु से अपाहज, तथा अंधा पुरूष कैसे दौड़ कर अपने प्यारे के गले जा लगे ?

जिस प्रकार एक टाँग व बाजु से अपाहज और अंधा मनुष्य अपने संसाकित प्रेम के मिलाप का रस अच्छी तरह नहीं ले सकता, इसी प्रकार यह जीव भी अपने प्यारे परमेश्वर के मिलाप के रस को इसलिए नहीं ले सकता क्योंकि उस के पास परमेश्वर को मिलने के लिए ईश्वरीय भय रूपी पैर, ईश्वरीय प्रेम रूपी हाथ सुरति रूपी नेत्र नहीं हैं। ईश्वरीय भय, भाव तथा सच्ची सुरति द्वारा ही परमेश्वर रूपी पति के साथ मिलाप हो सकता है। इन दैवी गुणों के बिना प्रभु मिलाप संभव नहीं है। यथा :

"दिसै सुणीऐ जाणीऐ, साउ न पाईआ जाइ ॥

रुहला टुंडा अंधला, किउ गलि लगै धाइ ॥

भै के चरण, कर भाव के, लोइण सुरति करेइ ॥

नानकु कहै सिआणीए, इव कंत मिलावा होइ ॥" [माझ की वार, महला १ में से]

26. मनुष्य की इंद्रियां प्रभु का गुण-गायन कर के ही शांत की जा सकती हैं

मनुष्य का मुंह मायावादी रूचियों वाली बातों अथवा विषय-विकारों की बातें कर-कर के भी तृप्त नहीं होता न ही मनुष्य के कान मायावादी बातों अथवा विषय-विकारों की बातें सुन-सुन कर ही तृप्त होते हैं और इस प्रकार मनुष्य की आंखें भी पराया रूप देख-देख कर भी तृप्त नहीं होती है। यह सब मानवीय अंग, एक न एक प्रकार के खादों के ग्राहक है। इन खादों को पूरा करने से इंद्रियों की भूख नहीं मिटती। बात समझाने पर भी इन अंगों की तृष्णा नहीं मिटती और वे तृप्त नहीं हो सकते। गुरू अंगद देव जी कहते

हैं कि तृष्णा भरा मन तब ही तृप्ति के घर में आता है जब वह परमेश्वर के गुण गा-गा कर गुणों के मालिक परमेश्वर में ही समा जाय या एकमेव हो जाय। भाव यह कि तृष्णालु मनुष्य की इंद्रियां का खादों के रस से छुटकारा तो ही हो सकता है, जब वह परमेश्वर का यश-गायन करते-करते परमेश्वर में ही लीन हो जाये। यथा :

आखणु आखि न रजिआ, सुनणि न रजे कंन //

अखी देखि न रजीआ, गुण गाहक इक वंन //

भुखिआ भुख न उतरै, गली भुख न जाइ //

नानक भुखा ता रजै, जा गुण कहि गुणी समाइ // [माझ की वार, महला १ में से]

****

सिख मिशनरी कालेज (रजि.) के लक्ष्य

(1) श्री गुरु ग्रंथ साहिब की गुरमत विचारधारा को दृढ़ करवाना तथा दंभी, पाखंडी व अज्ञानी देहधारी गुरुडम के प्रसार को रोकना ।

(2) सिख नोजवानों को सिख पंथ का अद्वितीय इतिहास दृढ़ करवा कर पतित होने तथा नशों के घातक रोग से बचाना ।

(3) अच्छे पढ़े-लिखे, प्रशिक्षित तथा जीवन वाले निश्काम प्रचारक तैयार करने हेतु प्रत्येक शहर में सिख मिशनरी कालेज की ओर से द्वि-वर्षीय सिख मिशनरी कोर्स करवाने के लिए निःशुल्क कक्षाओं का प्रबंध करना ।

(4) प्रत्येक परिवार में गुरमत विचारधारा दृढ़ करवाने हेतु कालेज द्वारा प्रकाशित (पंजाबी, हिन्दी) में निकलने वाली सिख फुलवाड़ी पत्रिका हर परिवार में पहुँचाना तथा द्वि-वर्षीय सिख मिशनरी कोर्स पत्राचार पाठ्यक्रम घर बैठे डाक द्वारा करवाना ।

(5) स्कूलों, कालेजों, गांवों तथा शहरों में कालेज द्वारा प्रशिक्षित प्रचारकों से आदर्श गुरमत समागम करवाना ।

(6) सिख साहित्य की खोज करके, बच्चों तथा व्यस्कों के लिए छपवाकर लागत-मात्र मूल्य पर प्रचार हेतु बांटना ।

नोट : सिख मिशनरी कालिज : निरोल धार्मिक जयेबन्दी है । इसका राजनीति या किसी धड़ेबन्दी से कोई सम्बन्ध नहीं ।

उपरोक्त लक्ष्यों को पूरा करने के लिए आपके सहयोग की मांग करते हैं ।

फ्री लिटरेचर फंड में अपना योगदान दें

सिख मिशनरी कालेज लुधियाना ने प्रत्येक सिख घर में फ्री धार्मिक लिटरेचर पंहुचाने का यत्न किया है । प्रत्येक मास 30000 की गिनती में गुरबाणी, सिख इतिहास और सिख रहत मर्यादा के किसी भी पहलू पर लिटरेचर छाप कर बांटा जाता है ।

धर्म प्रचार की इस महान सेवा में हिस्सा डालने के लिए प्रत्येक पाठक से निवेदन किया जाता है । आप यह लिटरेचर 50/- रू: प्रति सैंकडा के हिसाब से भेज कर मंगवाए ।

फ्री लिटरेचर मंगवाने तथा पैसे भेजने का पता —

सिख मिशनरी कालिज (रजि:)

1051, कूचा न : 14, फीलड गंज, लुधियाना-8

सब आफिस - A-143, फतेह नगर, नई दिल्ली-110018

ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਕਾਲਜ ਦੀਆਂ ਖੋਜ ਭਰਪੂਰ ਪੁਸਤਕਾਂ

	ਰੁਪਏ
ਪ੍ਰਸਪੈਕਟਸ	2
ਪੰਥ ਦਰਦੀਓ ਕੁਝ ਕਰੋ (1)	3
" " " (2)	2
ਖਾਲਸਾ ਨਿਰੂਪਣ	2
ਸਿੱਖ ਜੀਵਨ ਜਾਚ	2
ਨਿਆਰਾ ਖਾਲਸਾ	3
ਸ਼ਬਦ ਗੁਰੂ ਦੀ ਮਹੱਤਤਾ	4
ਗੁਰੂ ਮਾਨਿਓ ਗਰੰਥ	3
ਗੁਰਬਾਣੀ ਦਾ ਸ਼ੁੱਧ ਉਚਾਰਣ	3
ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਆਕਰਣ ਦੇ ਨੇਮ	3
ਚੋਣਵੀਆਂ ਕਵਿਤਾਵਾਂ	3
ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਮੁਢਲੇ ਸਿਧਾਂਤ	2
ਇਤਿਹਾਸ ਦਸ ਗੁਰੂ ਸਹਿਬਾਨ	4
ਖੂਨ ਸ਼ਹੀਦਾਂ ਦਾ (ਚਿੱਤ੍ਰਾਂ ਸਮੇਤ)	4
ਜੀਵਨੀਆਂ :	
ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ	6
ਗੁਰੂ ਅੰਗਦ ਦੇਵ ਜੀ	6
ਗੁਰੂ ਅਮਰ ਦਾਸ ਜੀ	8
ਸ਼ਹੀਦੀ ਗੁਰੂ ਅਰਜਨ ਦੇਵ ਜੀ	3
ਮਰਦ ਅਗੰਮੜਾ (ਜੀਵਨੀ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ)	10
ਬਾਬਾ ਬੰਦਾ ਸਿੰਘ ਬਹਾਦਰ	3
ਸ਼ਹੀਦ ਭਾਈ ਮਨੀ ਸਿੰਘ ਜੀ	2
ਨਵਾਬ ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਜੀ	2
ਸ. ਜੱਸਾ ਸਿੰਘ ਰਾਮਗੜ੍ਹੀਆ	2
ਸ. ਜੱਸਾ ਸਿੰਘ ਆਹਲੂਵਾਲੀਆ	3
ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ	3
ਸ. ਹਰੀ ਸਿੰਘ ਨਲੂਆ	2
ਅਕਾਲੀ ਫੂਲਾ ਸਿੰਘ	2
ਗਿਆਨੀ ਦਿੱਤ ਸਿੰਘ	1
ਬਾਬਾ ਗੁਰਦਿੱਤ ਸਿੰਘ (ਕਾਮਾ ਗਾਟਾ ਮਾਰੂ)	1
ਸ. ਸ਼ਾਮ ਸਿੰਘ ਅਟਾਰੀ	2
ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਮਹਾਨ ਵਿਦਵਾਨ	3
ਚੋਣਵੀਆਂ ਸਿੱਖ ਜੀਵਨੀਆਂ	4
ਭਾਈ ਨੰਦ ਲਾਲ ਸਿੰਘ	3
ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ	2
ਭਾਈ ਮਹਾਰਾਜ ਸਿੰਘ	1
ਸਾਡਾ ਵਿਰਸਾ ਸਾਡਾ ਇਤਿਹਾਸ	6
ਸ਼ਬਦ ਵਿਆਖਿਆ 8 ਭਾਗ	18
ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਫਿਲਾਸਫੀ (5) ਭਾਗ	23
ਜਾਪੁ ਸਾਹਿਬ ਸਟੀਕ	3
ਸਵਯੇ ਚੌਪਈ ਸਟੀਕ	1
ਸੱਤੇ ਬਲਵੰਡ ਦੀ ਵਾਰ	1

	ਰੁਪਏ
ਸੁਖਮਨੀ ਸਾਹਿਬ ਸਟੀਕ	8
ਅਨੰਦ ਸਾਹਿਬ ਸਟੀਕ	3
33 ਸਵੱਈਏ ਸਟੀਕ ਪਾ: ੧੦	2
20 ਕਬਿੱਤ ਸਟੀਕ ਪਾ: ੧੦	3
ਅਨੰਦ ਕਾਰਜ (ਲਾਵਾਂ ਸਟੀਕ)	2
ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ ਸਟੀਕ	4
ਰਹਿਰਾਸ ਤੇ ਸੋਹਿਲਾ ਸਟੀਕ	3
ਆਸਾ ਕੀ ਵਾਰ ਸਟੀਕ	5
ਸਦ ਸਟੀਕ	3
ਬਾਰਹ ਮਾਹਾ ਸਟੀਕ	3
ਨਿਤਨੇਮ ਸਟੀਕ	14
ਸਾਕਾ ਨਨਕਾਣਾ ਸਾਹਿਬ	2
ਮੋਰਚਾ ਗੰਗਸਰ ਜੈਤੋ	2
ਮੋਰਚਾ ਗੁਰੂ ਕਾ ਬਾਗ	2
ਗੁਰਦੁਆਰਾ ਸੁਧਾਰ ਲਹਿਰ	4
ਸਿੰਘ ਸਭਾ ਲਹਿਰ	4
ਬੱਬਰ ਅਕਾਲੀ ਲਹਿਰ	2
ਸਿੱਖ ਮਿਸਲਾਂ	3
ਅਕਾਲੀ ਲਹਿਰ	2
ਸ਼ਹੀਦੀ ਸਾਕੇ (ਕਾਵਿ-ਪ੍ਰਸੰਗ)	2
ਪ੍ਰੋ. ਗੁਰਮੁਖ ਸਿੰਘ, ਦਿੱਤ ਸਿੰਘ	3
ਸਾਧੂ ਦਇਆ ਨੰਦ ਨਾਲ ਮੇਰਾ ਸੰਬਾਦ (ਗਿ: ਦਿਤ ਸਿੰਘ)	2
ਚੋਣਵੀਆਂ ਸਾਖੀਆਂ (6) ਭਾਗ	15
ਸਿੱਖੀ ਤੇ ਸਮਾਜਵਾਦ	1
ਯੋਗ ਦਰਸ਼ਨ ਤੇ ਗੁਰਮਤਿ	1
ਜੈਨ ਮੱਤ, ਬੁੱਧ ਮੱਤ ਤੇ ਗੁਰਮਤਿ	2
ਹਿੰਦੂ ਮੱਤ ਤੇ ਗੁਰਮਤਿ	2
ਈਸਾਈ ਮੱਤ, ਯਹੂਦੀ ਮੱਤ ਤੇ ਗੁਰਮਤਿ	2
ਇਸਲਾਮ ਤੇ ਗੁਰਮਤਿ	1
ਅਨਮੋਲ ਰਤਨ (ਸ਼ਬਦ ਸੰਗ੍ਰਹਿ)	2
ਦਸਮ ਗਰੰਥ ਬਾਰੇ	2
ਭਾਰਤ ਦੀ ਆਜ਼ਾਦੀ ਵਿਚ ਸਿੱਖਾਂ ਦਾ ਹਿੱਸਾ	3
ਚਿੱਠੀਆਂ ਲਿਖ ਸਤਿਗੁਰਾਂ ਵਲ ਪਾਈਆਂ	2
ਅਨਮਤੀ ਤਿਉਹਾਰਾਂ ਦਾ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਤੇ ਪ੍ਰਭਾਵ	1
ਗੁਰਮੁਖੀ ਅੱਖਰ ਗਿਆਨ	2
ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਡਾਇਰੀ	8
ਗੁਰਮਤਿ ਡਾਇਰੀ	2
ਸਿੱਖ ਰਹਿਤ ਮਰਯਾਦਾ	1
ਤੇਰੀ ਦੁਨੀਆਂ ਮੇਰੀ ਦੁਨੀਆਂ	6
ਸ਼ਬਦ ਲਗੋ ਗੁਰ ਮੀਠਾ	6

	ਰੁਪਏ
ਸਿੱਖੀ ਨਵੇਂ ਯੁਗ ਦਾ ਧਰਮ	2
ਸਿਮਰਨ ਕਿਵੇਂ ਕਰੀਏ	2
ਨਾਮ ਕੀ ਹੈ ਤੇ ਕਿਵੇਂ ਜਪੀਏ?	5
ਅਣਖੀਲਾ ਪੰਥ (ਕਵਿਤਾਵਾਂ)	5
ਸਭਸੈ ਊਪਰਿ ਗੁਰ ਸ਼ਬਦ ਵੀਚਾਰ	2
ਉਪਦੇਸ਼ ਗੁਰੂ ਤੇਗ ਬਹਾਦਰ ਜੀ	1
ਸਰੀਰ ਅਰੋਗ ਕਿਵੇਂ ਹੋਵੇ	2
ਪੁਕਾਰ	3
ਸਿੱਖ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ	3
ਗੁਟਕੇ	
ਨਿਤਨੇਮ ਤੇ ਹੋਰ ਬਾਣੀਆਂ ਵੱਡਾ	8
ਨਿਤਨੇਮ ਤੇ ਹੋਰ ਬਾਣੀਆਂ ਛੋਟਾ	6
ਨਿਤਨੇਮ ਤੇ ਹੋਰ ਬਾਣੀਆਂ ਸਫਰੀ	5
ਸੁਖਮਨੀ ਸਾਹਿਬ (ਵੱਡਾ)	8
ਸੁਖਮਨੀ ਸਾਹਿਬ (ਛੋਟਾ)	6
ਸੁਖਮਨੀ ਸਾਹਿਬ (ਸਫਰੀ)	5
ਜਾਪੁ ਸਾਹਿਬ ਤੇ ਸਵੱਈਏ	1
ਰਹਿਰਾਸ ਤੇ ਸੋਹਿਲਾ	1
ਜਪੁ ਜੀ ਸਾਹਿਬ	1
English Books	
Basic Principles of Sikhism	2
Why Am I a Sikh ?	1
Propagation of Sikh Thought	2
Sikh Religion	4
The Sikhism	6
Guru Nanak's Impact on History	4
(हिंदी पुस्तकें)	
सिख धर्म की शिक्षाएं	2
दस गुरूओं का इतिहास	5
खून शहीदों का (चित्रों सहित)	4
शिक्षाप्रद साखियां (4) भाग	8
खालसा की परिकल्पना	2
सिख जीवन पद्धति	2
गुरबाणी व्याख्या (4) भाग	14
जीवन गुरू नानक देव जी	8
शब्द गुरू एवं देहधारी गुरू डंम	5
सिख धर्म फिलासफी (2) भाग	11
गुरू मानिओ ग्रंथ	4
33 सवैये सटीक	2
सिख रहित मर्यादा	2
बाबा बंदा सिंघ बहादुर	3